RNI Regd. No.: DELHIN/2007/20953 वर्ष-9, अंक-3, जून 2016 Postal Regd. No.: DL(E)-20/5505/2016-18
Date of Posting: 11-12 Same Month

कृषि चौपाल

कृषि मूलम् जगत् सर्वम्

₹15

कृषि एवं ग्रामीण विकास को समर्पित हिंदी मासिक

krishi chaupal www.krishichaupal.org

जल
आज और कल

खास मुलाकात
मोहनभाई कुंदरिया

संकर बीजों का बीज गणित

कम पानी में धान की खेती

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना

ओल चौधरी के हुनर का कमाल

भारतीय स्टेट बैंक
हर भारतीय का बैंक

बिना जमीन बंधक किए ट्रैक्टर लोन पाइए, बस, गृह लक्ष्मी को साथ लाइए और ब्याज दर में भी छूट पाइए.

स्त्री शक्ति ट्रैक्टर लोन

स्त्री कृषि उद्यमियों का सशक्तिकरण

सह-उधारकर्ता स्त्री | जमीन बंधक नहीं
कम ब्याज दर | कम ईएमआई | शीघ्र स्वीकृति

*शर्तें लागू.

अपनी नज़दीकी एसबीआई शाखा से सम्पर्क करें
24X7 हेल्पलाइन: 1800 425 3800/1800 11 2211 (टोल फ्री) 080 26599990 या विजिट करें www.sbi.co.in

कृषि चौपाल

कृषि मूलम् जगत् सर्वम्

कृषि एवं ग्रामीण विकास को समर्पित हिन्दी मासिक पत्रिका

वर्ष-9 ❖ अंक-3 ❖ जून 2016

संपादक
महेन्द्र सिंह बोरा

संपादक मंडल
डॉ. गंगाशरण सैनी
एस. विश्वजीत प्रसाद
प्रेम सुंदरियाल, डॉ. नवीन नैनवाल
गणेश चंद्र पांडे, मदन जलाल,
महेश पपनै

राजनीतिक संपादक
ललित पांडे

सहायक संपादक
खुशाल सिंह

ब्यूरो प्रमुख अल्मोड़ा
पुष्कर बिष्ट

प्रसार
दलीप जीना

डिजाइन
कल्पना प्रिंटोग्राफिक्स

संपादकीय कार्यालय
सी-355, तृतीय तल, गली नं. 9,
वेस्ट विनोद नगर, दिल्ली-110092

क्षेत्रीय कार्यालय
मानपुर वेस्ट, रामपुर रोड हल्द्वानी,
जिला-नैनीताल, उत्तराखंड-263639

संपर्क: +91 9910406059,
8130956778, 9716407931

Email: krishichaupal@gmail.com
Website: krishichaupal.org

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक महेन्द्र सिंह बोरा द्वारा सी-355, तृतीय तल, गली नं. 9, वेस्ट विनोद नगर, दिल्ली-110092 से प्रकाशित और मयंक ऑफसेट प्रोसेस, 794/95 गुरु रामदास नगर एक्सटेंशन, लक्ष्मी नगर, दिल्ली-110092 से मुद्रित।

- 'कृषि चौपाल' पत्रिका से संबंधित विवाद का निपटारा दिल्ली सीमांतर्गत सक्षम न्यायालयों में ही किया जाएगा।
- उपरोक्त सभी पद अवैतनिक हैं।

कुछ और कहती है जमीनी हकीकत

कभी होती होंगी छह ऋतुएं! अब तो दो ऋतुएं होती हैं- एक सूखा, दूसरी बाढ़। अभी देश सूखा ऋतु से गुजर रहा है, इसके बाद बाढ़ का आगमन होगा। ये दोनों ऋतुएं किसान और उसके परिवार को भी असमय अपना ग्रास बना लेती हैं। सूखे के कारण किसानों और उनके परिजनों के हालात मोहिनी की कहानी बयां कर देते हैं। महाराष्ट्र के लातूर जिले की मोहिनी 12वीं में 70 फीसदी अंक लाती है, लेकिन पैसे के अभाव में वह आगे नहीं पढ़ पाती। घर वाले उसके लिए लड़का खोजना शुरू कर देते हैं, लेकिन हाथ पीले करने से पहले मोहिनी अपने गले में फांसी का फंदा डाल देती है। अपने पीछे पिता के नाम वह एक सुसाइड नोट छोड़ जाती है, जिसमें उसका और उसके परिवार का दर्द बयां है- 'मेरी मौत के बाद 13वीं या श्राद्ध जैसे कर्मकांडों पर पैसे खर्च मत करना। ये सारे कर्मकांड आत्मा की शांति के लिए होते हैं, लेकिन मैं अपनी खुशी से यह कदम उठा रही हूं। मुझे इस बात की खुशी है कि मैंने दहेज और शादी पर खर्च होने वाले रुपयों को बचाया है। हमारे पास जो एक एकड़ खेत है अब आपको उसे भी नहीं बेचना पड़ेगा।'

दरअसल, सूखे की वजह से मोहिनी के घर फसल नहीं आयी, जबकि छोटे-मोटे धंधों से पिता को इतनी आय नहीं हो रही थी कि उनका घर चल सके। मां-बाप को परेशान देख मोहिनी ने खुदकुशी का रास्ता चुन लिया। ज्यादातर किसानों और उनके घर का यही हाल है। फर्क सिर्फ इतना है कि कहीं मोहिनी फंदे पर झूल जाती है, तो कहीं कर्ज में डूबा किसान कीटनाशक खाकर मौत को गले लगा लेता है। लेकिन 'मन की बात' करने वाले हमारे हुक्करान अपनी दो साल की उपलब्धियों का जश्न मना रहे हैं। सरकार का कहना है कि उसने किसानों के लिए तमाम कोशिशें की हैं, लेकिन इसके बावजूद किसानों की आत्महत्या का सिलसिला थम नहीं रहा है।

यहां प्रसिद्ध अभिनेता नाना पाटेकर का बयान भी काबिलेगौर है। नाना का कहना है कि सरकार ने अपनी दो साल की उपलब्धियों के बखान में 1000 करोड़ रुपये पानी की तरह बहा दिये। जबकि महाराष्ट्र के किसानों का कर्ज मात्र 700 करोड़ रुपये है। यदि विकास की जमीनी हकीकत होती तो शायद सरकार को विज्ञापन में खर्चा नहीं करना पड़ता। इतनी धनराशि से तो दो राज्यों के किसानों को कर्ज से बाहर निकाला जा सकता था और उनकी आत्महत्या का सिलसिला भी रोका जा सकता था।

हालांकि यह सच है कि सरकार ने कुछ अच्छी योजनाएं चलायीं, जैसे- मृदा स्वास्थ्य कार्ड और प्रधानमंत्री सिंचाई योजना, लेकिन ये उतनी सफल नहीं हो पाई जितनी कि सरकार को उम्मीद थी। दिलचस्प बात यह कि सरकार ने यह सोचने की जहमत तक नहीं उठाई कि उसकी ये योजनाएं विफल क्यों हुई। इन कारणों को जानने और उनमें बदलाव करने की बजाय अब सरकार प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना और उज्ज्वला योजना जैसी नई योजनाओं को लेकर बड़े-बड़े दावे कर रही है। कागजों में योजनाएं बना देना और जमीनी स्तर पर उनका क्रियान्वयन करने में काफी अंतर होता है। जैसे अभी सरकार ने किसानों को सूखे से राहत के नाम पर 'मनरेगा' में काम देने का बढ़-चढ़कर प्रचार किया, लेकिन जमीनी स्तर की रिपोर्ट बता रही है कि 'मनरेगा' के तहत ज्यादातर कार्य आम मजदूरों के लिए नहीं हैं। अधिकतर जगहों में बड़े-बड़े गड्डे और कुएं खोदने होते हैं। ये काम बड़ी मशीनें कर रही हैं। खेतिहर किसानों-मजदूरों के साथ ही पार्टियों के स्थानीय प्रतिनिधि भी मानते हैं कि बड़े काम ठेकेदार मशीनों से कर लेते हैं और बाद में लोगों की जॉबबुक में इसकी एंट्री कर दी जाती है। 'मनरेगा' में पारदर्शिता लाने को अपनी उपलब्धि बता रही सरकार इस समस्या पर गौर कब करेगी कि ऐसी योजनाओं में से वे कार्य हटा क्यों नहीं दिए जाते जिन्हें आम मजदूर नहीं कर सकते। बढ़े हुए कृषि बजट पर उत्साह व्यक्त करने वाले और यह दावा करने वाले कि आने वाला समय कृषि के अर्थशास्त्र को बदल देगा, ऐसे लोगों को इन छोटी-छोटी चीजों पर ध्यान देना होगा।

बहरहाल, इस बार अच्छे मानसून की संभावना है, ऐसे में उसी हद तक बाढ़ का आना भी स्वाभाविक है। सूखे से निपटने में पूरी तरह असफल रही सरकार क्या बाढ़ से किसानों को निजाद दिला पाएगी?

महेन्द्र सिंह बोरा
संपादक

इस अंक में...

कृषि समाचार	05
जल, आज और कल	10
सूखे के मौसम में पानी-पानी सरकारें	12
प्याज का काम रुलाना ही है	13
हाशिए पर गांव के गरीब	15
प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना	16
खास मुलाकातः मोहनभाई कुंदरिया	18
संकर बीजों का बीजगणित	20
अजोला उत्पादन एवं धान की खेती में उसका उपयोग	21
धान के रोग एवं उनसे बचाव	22
कम पानी में धान की खेती	24
टमाटर की भरपूर खेती	25
आम के तनाभेदक कीट का प्रबंधन	26
करी पत्ते के औषधीय उपाय	26
ओल चौधरी के हुनर का कमाल	27
पिजाजी का 'काण घा' और रामदेव का एलोवेरा	28
जनता ही बचा सकती है जंगल	30
संघ को नापसंद डी-फोर	
मोदी की नजरों में चढ़े	32
उत्तर प्रदेश में सजने लगा रण	32
क्या विकल्प का रास्ता चुनेंगे रावत	33
किसान कवि घाघ की कविताएं	34

चिट्ठी-पत्री

आपके द्वारा प्रेषित कृषि और ग्रामीण विकास को समर्पित हिंदी मासिक पत्रिका 'कृषि चौपाल' का मार्च 2016 अंक प्राप्त हुआ। बहुत-बहुत धन्यवाद। पत्रिका अपने नाम को चरितार्थ करती हुई गागर में सागर के समान है। पत्रिका में प्रकाशित कृषि आधारित निबंध न केवल कृषकों के लिए लाभदायक हैं बल्कि आम आदमी भी इससे लाभ उठा सकता है। 'एक सफल काश्तकार' में श्री हरिकिशन लाल चड्ढा की जीवनी प्रेरणादायक और पठनीय है। पत्रिका में प्रकाशित सामग्री को इतने उत्कृष्ट ढंग से प्रस्तुत किया गया है कि पूरी पत्रिका में निरंतरता है और एक गैर कृषि कार्यरत व्यक्ति को भी पढ़ने में रोचकता का एहसास होता है। आप एवं संपादक मंडल बधाई के पात्र हैं।

इस सुंदर अंक को प्रकाशित करने के लिए आपको एवं संपादक मंडल को हार्दिक बधाई। मैं कामना करता हूं कि पत्रिका की यह उत्कृष्टता सदैव बनी रहेगी।

-अम्बरीश कुमार सिंह
मुख्य प्रबंधक (राजभाषा)
कार्पोरेशन बैंक, प्रधान कार्यालय, मंगलूरू

कृषि चौपाल के अंक की पीडीएफ मिली। बहुत ही सराहनीय प्रयास है। कृषि जगत के लिए यह बहुत ही उपयोगी साबित होगी। कुछ पृष्ठ साहित्य के रखें तो सूचित करवायें। कुछ ग्रामीण विषयक लघुकथाएं भेजूंगा। बहुत-बहुत शुभकामनाएं। सस्नेह!

-मधुदीप

'कृषि चौपाल' का मार्च 2016 अंक पढ़कर बहुत खुशी हुई। इस कृषि प्रधान देश में 'कृषि चौपाल' जैसी पत्रिका का प्रकाशन होना बहुत ही सुखद है।

पत्रिका का सम्पादकीय समसामयिक, सटीक और प्रभावपूर्ण है। इसमें किसानों के लिए सही मुद्दा उठाया गया है। इस अंक में सम्मिलित आलेख रोचक, जानकारी से परिपूर्ण और उपयोगी हैं। आकर्षक मुखपृष्ठ, सुन्दर और दोषरहित मुद्रण वाली यह पत्रिका कृषि क्षेत्र के लिए अनमोल खजाना है। मुझे विश्वास है कि यह शीघ्र ही लोकप्रियता के शिखर पर होगी। मेरी ओर से इस प्रशंसनीय कार्य के लिए बधाई और शुभकामनाएं।

-त्रिलोक सिंह ठकुरेला, साहित्यकार
आबू रोड, राजस्थान

कृषि प्रधान देश होने के बावजूद मीडिया से खेती-किसानी और गांव गायब होते जा रहे हैं। ऐसे में 'कृषि चौपाल' का प्रकाशन आपका एक सराहनीय कदम है। 'कृषि चौपाल' का जनवरी 2016 अंक देखा। काफी रोचक, पठनीय एवं ज्ञानवर्धक सामग्री आपने इस अंक में प्रस्तुत की है। महत्वपूर्ण कृषि समाचार, विकसित होते गांव आदि समाचार फील गुड का अहसास कराने वाले हैं। आवरण कथा समयानुकूल है। खाकशां और कासनी के बारे में जानकारी भी उपयोगी है। किसानों की रोजमर्रा की समस्याएं और उनका समाधान स्तंभ भी होना चाहिए। कई किसान काफी महत्वपूर्ण काम कर रहे हैं, इनके बारे में बताया जाना चाहिए। दो-तीन पृष्ठ मनोरंजन के लिए भी रखें। मैं पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूं।

-डॉ. महर उद्दीन खां
बढ़पुरा, दादरी, जी.बी. नगर, उत्तर प्रदेश

'कृषि चौपाल' निरंतर ई-मेल के माध्यम से प्राप्त हो रही है। कृषि मूलम् जगत् सर्वम् के भाव से आपका प्रयास सराहनीय है। उत्तराखंड के परिप्रेक्ष्य में दिसंबर अंक की सामग्री खोजपूर्ण के साथ-साथ सोचपूर्ण भी है। ग्रामीण भारत और किसान के सरोकारों को लेकर आपके प्रयासों हेतु पुनः साधुवाद।

-हेम बहुगुणा
शहरफाटक, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

किसानों एवं ग्रामीण विकास को समर्पित पत्रिका 'कृषि चौपाल' बहुत ही लोकोपयोगी और किसानों के हित साधने वाली है। हमारी ओर से आपको बहुत-बहुत शुभकामनाएं। पत्रिका की निरंतरता बनाएं रखें। धन्यवाद।

-महेश सोनी

मैंने 'कृषि चौपाल' का अंक पढ़ा। यह बहुत ही अच्छी जानकारियों को समेटे हुए कृषक वर्ग के लिए अत्यंत लाभकारी पत्रिका है। मैं बिहार का रहने वाला हूं पर दिल्ली में रहता हूं। हमारी तरफ (हाजीपुर, वैशाली) में केले की खेती होती है और केले के खेत में अनचाहे रूप से भांग बड़े पैमाने पर उपज जाता है जिसे हम किसान बहुत ही मुश्किल से खत्म कर पाते हैं। हमें यह पता नहीं था की भांग की खेती कानूनी रूप से भी की जा सकती है तथा इसके इतने सारे उपयोग हैं। और भी कई जानकारी प्राप्त हुई। आपका यह प्रयास सफल कहा जाएगा तथा बहुत उपयोगी है भारतीय कृषि जगत के लिए। आपकी लेखनी को ताकत मिले ताकि हमारा कृषि जगत लाभान्वित हो सके।

-पंकज कुमार द्विवेदी

आपके द्वारा भेजा गया 'कृषि चौपाल' का अंक देखा जो किसानो के लिये मील का पत्थर साबित होगा।

-राम विशाल देव

'कृषि चौपाल' का फरवरी 2015 का अंक प्राप्त हुआ। देखकर बहुत प्रसन्नता हुई कि आप जैसे व्यक्ति प्रिंट मीडिया के द्वारा भारतीय कृषि संबंधी गतिविधियों पर पैनी नजर रखे हुए हैं। आपका यह कदम सराहनीय है।

'आखिर खेती योग्य भूमि का ही अधिग्रहण क्यों?' लेख सम-सामयिक और राष्ट्रीय महत्व का है। इस पर आपने सटीक टिप्पणी की है। निसंदेह इस विषय पर पुनर्विचार किया जाना चाहिए कि खेती योग्य भूमि का ही अधिग्रहण क्यों किया जाना चाहिए। एक संवेदनशील सरकार को इस मुद्दे पर गंभीरता से सोचना चाहिए। यदि वह ऐसा नहीं करती तो वह कृषि के प्रति हितकारी नहीं है। इससे देश का नुकसान होगा।

एक बात की कमी प्रतीत होती है। इसमें ग्रामीणों को विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण और उन्नत बीजों कहां उपलब्ध होंगे आदि जैसे विषयों की जानकारी देना भी जरूरी है। एक प्रश्न मंच जैसा पेज भी पत्रिका में शामिल कर सकते हैं जिसमें पाठक अपनी जिज्ञासाएं रखें और विशेषज्ञ लोग उनका समाधान बताएं।

-शैलेन्द्र प्रसाद बहुगुणा
अहमदाबाद (गुजरात)

दाल के मामले में अपने किसानों पर सरकार को भरोसा नहीं

दालों की बेकाबू होती कीमतों पर अंकुश लगाने में नाकाम रही सरकार ने अब नयी रणनीति बना ली है। कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय का मानना है कि भारतीय कंपनियों को अफ्रीका और म्यांमार में दालों की कांट्रेक्ट फार्मिंग करानी चाहिए। इसका मतलब है कि सरकार यह मान चुकी है कि दालों की बढ़ती कीमतों पर लगाम का हल विदेश में छिपा है। उसका भारत के किसानों पर से भरोसा उठ गया है।

जानकारी के मुताबिक 19 मई को इस संबंध में कृषि सचिव ने एक अहम बैठक की। इस बैठक में अफ्रीका और म्यांमार में दालों की कांट्रेक्ट खेती के बारे में चर्चा की गयी। असल में यह सिलसिला पहले से चल रहा है। सबसे पहले 14 सितंबर, 2015 को सचिवों की एक समिति की बैठक में चर्चा की गयी थी, जिसमें कृषि मंत्रालय को विदेश मंत्रालय और कामर्स मंत्रालय के साथ बातचीत कर अफ्रीका में दालों के उत्पादन के विकल्प खोजने के लिए कहा गया। इसके बाद 5 नवंबर, 2015 को एक अंतरमंत्रालयी बैठक हुई। इस बैठक में विदेश मंत्रालय, डिपार्टमेंट ऑफ इंडस्ट्रियल पॉलिसी एंड प्रमोशन जैसे सरकारी विभागों के अलावा नेफेड, स्माल फार्मर्स एग्रीबिजनेस कंसोर्टियम, एसटीसी और पंजाब एग्रो इंडस्ट्रीज जैसी सरकारी संस्थाओं के अलावा कारपोरेट संगठन सीआईआई और महेंद्रा एंड महेंद्रा जैसी निजी कंपनियों के पदाधिकारियों ने शिरकत की। उद्योग संगठनों से लेकर कंपनियों तक को सरकार ने दालों की कीमतें कम करने के उपाय के लिए बुलाया, लेकिन ताज्जुब की बात यह है कि जो किसान दालों का उत्पादन कर रहे हैं, उनके किसी भी संगठन को मीटिंग में नहीं बुलाया गया।

गौरतलब है कि भारत दुनिया का दालों का सबसे बड़ा उत्पादक और उपभोक्ता देश है। भारत दुनिया का 22 फीसदी दालों का उत्पादन करता है। दुनिया की 68 फीसदी अरहर और 67 फीसदी चना भारत में पैदा होती है। मसूर का 22 फीसदी और उड़द का 70 फीसदी उत्पादन भारत में होता है। फिर भी दालों की कीमतों को थामने में सरकार के पसीने छूट रहे हैं। अब इसके तोड़ के रूप में अफ्रीका और म्यांमार में कॉन्ट्रेक्ट फार्मिंग को देखा जा रहा है। इस पहल पर एक कृषि विशेषज्ञ का कहना है कि नब्बे के दशक में भारत खाद्य तेलों के मामले में केवल 10 फीसदी ही आयात पर निर्भर था और आज यह हिस्सेदारी करीब 40 फीसदी तक पहुंच गई है। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि घरेलू उत्पादन को बढ़ावा नहीं दिया गया, किसानों के बेहतर दाम व तकनीक नहीं दी गई और विदेशों में कांट्रेक्ट फार्मिंग जैसे विकल्पों को अपनाया गया। अब ऐसा ही दालों के साथ किया जा रहा है। यह पहल देश के किसानों और उपभोक्ता दोनों के लिए नुकसानदेह साबित हो सकती है। इससे हमारे किसाना हतोत्साहित होंगे और दाल के मामले में हमारी विदेशी निर्भरता बढ़ती जाएगी।

उज्ज्वला योजना लागू करने में नहीं चलेगी कोताही

गांवों और दूरदराज के इलाकों में रहने वाली पांच करोड़ गृहणियों को रसोई गैस देने की 'उज्ज्वला योजना' में सरकार कोई कोताही नहीं बरतना चाहती। इसलिए इसे लागू करने के पुख्ता इंतजामों के साथ इसकी निगरानी के लिए फुलप्रूफ तरीका अपना रही है। देश के 674 जिलों में इसे लागू करने का खास ध्यान दिया जा रहा है। योजना के तहत तीन वर्ष के भीतर गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली पांच करोड़ गृहणियों को रसोई गैस कनेक्शन मिलेगा। सरकार की इस महत्वाकांक्षी योजना में 8,000 करोड़ रुपये खर्च होंगे।

योजना का फायदा ज्यादा से ज्यादा घरों तक पहुंचाने के लिए जिलों में एक को-ऑर्डिनेटर की नियुक्ति की जा रही है। तेल कंपनियों की तरफ से नियुक्त होने वाले ये अधिकारी कंपनियों और स्थानीय प्रशासन के बीच कड़ी की भूमिका निभाएंगे।

गौरतलब है कि वित्तमंत्री अरुण जेटली ने 2016-17 के बजट में यह कहते हुए योजना की घोषणा की थी कि रसोई गैस गरीबों को नहीं मिलती है। उन्होंने बजट भाषण में कहा था कि भारत की महिलाओं को खाना बनाते समय धुएं से जूझना पड़ता है। विशेषज्ञों के मुताबिक रसोई में खुली आग के धुएं में एक घंटे बैठने का मतलब है 400 सिगरेट का धुआं सूंघना। इसके बाद 1 मई को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने पूर्वी उत्तर प्रदेश के बलिया में भारी भीड़ के बीच इस योजना का शुभारंभ किया।

अलविदा पंचवर्षीय योजना

देश के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू की आर्थिक नीतियों की देन पंचवर्षीय योजनाएं अब जल्द ही इतिहास बन सकती हैं। सरकार अगले वित्त वर्ष से नेशनल डेवलपमेंट एजेंडा के तहत सात साल की रणनीति तैयार करेगी। फिलहाल चल रही 12वीं पंचवर्षीय योजना की अवधि अगले साल (2017) में मार्च में पूरी हो रही है। पंचवर्षीय योजनाओं के क्षेत्रों में इजाफा करते हुए यह एजेंडा सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों के साथ-साथ रक्षा और आंतरिक सुरक्षा को भी शामिल करेगा। नेशनल डेवलपमेंट एजेंडा की हर 3 साल में समीक्षा की जाएगी। इसका पहला मध्यावधि मूल्यांकन 2019-20 में होगा। मोदी सरकार ने 2 साल पहले सत्ता संभालने के बाद योजना आयोग को समाप्त कर दिया था, जिसकी स्थापना नेहरू ने ही 1950 में की थी। मोदी सरकार ने इसे नीति आयोग से बदल दिया और अब यह प्लानिंग के लिए फंड मुहैया कराने की प्रक्रिया में शामिल नहीं है। विजन डॉक्यूमेंट की तैयारी का जिम्मा नीति आयोग का ही होगा।

अब पानी की बर्बादी पड़ेगी महंगी

बहुत जल्द एक ऐसी व्यवस्था बन सकती है, जिससे देश में किसी को पानी के लिए तरसना न पड़े। सरकार एक कानून बनाने जा रही है, जिसमें हर दिन 25 लीटर तक मुफ्त पानी आपका अधिकार आपको मिलेगा। इस कानून के

ड्राफ्ट में प्रावधान है कि सरकार हर व्यक्ति को उसकी मौलिक जरूरतों के बराबर पानी मुफ्त में दे। जानकार बताते हैं कि पानी का मामला राज्यों के अधिकार क्षेत्र में आता है, इसलिए अभी केन्द्र ने इस बारे में राज्यों से सुझाव मांगे हैं। प्रस्ताव के तहत खेती में एक तय सीमा से ज्यादा पानी इस्तेमाल करने पर इसकी कीमत भी चुकानी पड़ सकती है।

देश के कई भागों में पड़े सूखे और पानी के लिए मचे कोहराम के बाद केंद्र सरकार पानी की बरबादी को लेकर सख्त हो गई है। सरकार पानी के उपयोग और पेयजल को लेकर एक कड़े कानून का प्रावधान कर रही है जिसके लिए प्रारूप बनाने का काम किया जा रहा है।

सूत्रों के मुताबिक इस कानून में पानी की बर्बादी को रोकने के लिए भी कड़े प्रावधान हैं। गैर जरूरी कामों जैसे बगीचों को सींचने के लिए शोधित पानी का ही इस्तेमाल करना होगा। कारखानों में पानी के इस्तेमाल पर 'कर' लग सकता है। सरकार इस बार पानी को बर्बाद करने पर दंड का प्रावधान भी करने जा रही है। अगर कारखाने की वजह से पानी गंदा होता है तो इसकी सफाई की जिम्मेदारी भी उसी की होगी।

अब पांच दुधारू पशुओं का बीमा

नई पशुधन बीमा योजना के तहत अब किसान अपने पांच दुधारू पशुओं तथा 50 छोटे पशुओं को बीमा करवा सकता है। जबकि 2014 की पॉलिसी के तहत किसान केवल 2 दुधारू पशुओं का ही बीमा करवा सकता था। केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री राधा मोहन सिंह ने बताया कि वर्तमान में इस पॉलिसी के तहत 50 लाख 56 हजार पशुओं का बीमा किया जा चुका है। उन्होंने बताया कि प्रदेश सरकार केंद्रीय एडवाईजरी तथा पशु चिकित्सकों के सहयोग से बीमा प्रीमियम तय करती है। उसमें केंद्रीय सरकार की भूमिका नहीं होती है। अलबत्ता एससी/एसटी तथा अन्य पिछड़ा वर्ग के सदस्यों के प्रीमियमों की देय राशि का भुगतान जरूर किया जाता है। राज्यों तथा बीमा कंपनियों को ताकीद की गयी है कि किसानों के जानवरों की मृत्यु होने की दशा में किसानों को क्षतिपूर्ति सीधे उसके बैंक खातों में पहुंचा दी जाए।

धान की खेती न करें किसानः रमन सिंह

छत्तीसगढ में भूजल के स्तर में गिरावट को देखते हुए मुख्यमंत्री डॉ. रमन सिंह ने अपील की है कि किसान भाई इस गर्मी में धान की फसल न उगायें। धान की बजाय कम पानी में होनी वाली अन्य फसलें उगायें। डॉ. सिंह ने प्रदेशवासियों का आह्वान करते हुए कहा कि हम सबको अपने बच्चों के बेहतर भविष्य के लिए पानी बचाने की जरूरत है। उन्होंने कहा है कि एक किलो धान पैदा करने में लगभग चार हजार लीटर पानी की खपत होती है, जिसके लिए भारी मात्रा में भूजल का दोहन करना पड़ता है। उन्होंने कहा कि पिछले साल कम बारिश के कारण इस साल सूखे की स्थिति है और बहुत से क्षेत्रों में पेयजल का संकट चल रहा है। ऐसे में जमीन के नीचे का पानी बचाना बेहद जरूरी है।

गौरतलब है कि फसलों की नवीनतम संकर प्रजातियों में सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती है। इन प्रजातियों से अधिक उत्पादन लेने के लिए काफी मात्रा में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है और परिणाम लेने के लिए बार-बार सिंचाई की जरूरत पड़ती है। जिसके लिए भारी मात्रा में भूजल का दोहन किया जाता है। दूसरी तरफ किसान अधिक मात्रा में धनार्जन की इच्छा से अधिक पानी चाहने वाली नकदी व अन्य फसलों जैसे-आलू, गन्ना, धान, गेहूं इत्यादि का अधिकाधिक उत्पादन कर रहे हैं। कृषि के मूलभूत सिद्धांत 'फसल चक्र' को किसान छोड़ते जा रहे हैं। एक बात यह भी है कि पंपसेट व ट्यूबवेल द्वारा कम लागत व कम समय में अधिक जल खींचा जा सकता है।

जीरे में तेजी

जीरे के दाम इस साल नया रिकॉर्ड बना सकते हैं। मजबूत मांग और उत्पादन में कमी के चलते यह मुमकिन हो सकता है। पिछले साल के मुकाबले अभी जीरे के दाम बीस फीसदी ज्यादा हैं। इस वक्त जीरे का भाव 172 रुपए प्रति किलो है, लेकिन व्यापार विशेषज्ञों का कहना है कि राजस्थान और गुजरात के जीरा पैदावार वाले इलाकों में बारिश के न होने से इसकी कीमतें नई ऊंचाई पर पहुंच सकती हैं। दरअसल घरेलू और विदेशी बाजार में मांग में फिर से तेजी आने के कारण जीरे की कीमतें बढ़ रही हैं। कम उत्पादन की आशंका और विदेशी बाजार में डिमांड बढ़ने की उम्मीद के चलते इसकी कीमतों में और तेजी की संभावना जताई जा रही है। ट्रेडर्स के मुताबिक 2015-16 में कुल उत्पादन के गिरकर करीब 2.5 लाख टन पर आने की आशंका है। पिछले साल देश में जीरे का उत्पादन तीन लाख टन था। जनवरी के बाद से ही ऊंचे तापमान के चलते आवक में बड़ी गिरावट देखने को मिल रही है। हालांकि निर्यात में पिछले साल सुस्ती रहने के बाद इस साल इजाफा देखने को मिल सकता है।

चाय के उत्पादन में कमी के आसार

दार्जिलिंग, दुअर्स और असम के चाय पैदावार वाले इलाकों में खराब मौसम के चलते इस साल चाय का उत्पादन 5 से 10 फीसदी तक घट सकता है। दरअसल दार्जिलिंग और दुअर्स के कुछ हिस्सों में बारिश नहीं हुई है। दूसरी ओर असम के चाय बागानों में जरूरत से ज्यादा बारिश हुई है। इसकी वजह से पिछले साल के मुकाबले इस साल अप्रैल में चाय का उत्पादन तकरीबन दस फीसदी गिरा है। दार्जिलिंग के बागानों पर खराब मौसम की तगड़ी मार पड़ी है। इस इलाके में बिल्कुल बारिश नहीं हुई है। यहां देश की सबसे अच्छी चाय पैदा होती है। आदर्श तौर पर इस वक्त तक बागानों में दस दिन तक बारिश हो जानी चाहिए। मार्च में बागानों में महज दो इंच बारिश हुई है, जो बहुत कम है। बारिश की कमी से दार्जिलिंग के चाय बागानों पर बुरा असर पड़ा है। इस चाय की ज्यादातर बिक्री विदेश में होती है। कमजोर बारिश का असर सेकेंड फ्लश पर भी दिखाई देगा। दार्जिलिंग में 87 चाय बागान हैं, जिनसे सालाना 85 से 90 लाख किलो चाय पैदा होती है।

बढ़ेगी चावल की कीमत

पिछले दो सत्रों में कम उत्पादन के कारण आने वाले महीनों में चावल दस से पंद्रह फीसदी महंगा हो सकता है। पिछले दो मानसून सीजन में वर्षा की कमी और असमान वितरण से धान की बुआई प्रभावित हुई थी। केंद्रीय कृषि मंत्रालय ने अनुमान जताया है कि इस बार उत्पादन करीब बीस लाख टन घटकर 10.361 करोड़ टन रहेगा। जून में खत्म हो रहे फसल वर्ष में उत्पादन तीस से पचास लाख टन तक कम हो सकता है। देश के तमाम राज्यों में चावल मध्यम वर्ग का प्रमुख खाद्यान्न है। हालांकि इसकी कीमतों में भारी बढ़ोत्तरी के आसार नहीं हैं। सरकारी गोदामों में चावल का भरपूर भंडार है। हैदराबाद स्थित भारतीय चावल अनुसंधान संस्थान का कहना है कि चालू फसल वर्ष में भारत का चावल उत्पादन करीब तीस लाख टन घटने का अनुमान है, जिससे कीमतों में बढ़ोत्तरी के आसार हैं। हालांकि सामान्य से अधिक मानसून की बारिश के अनुमान और भरपूर स्टॉक उपलब्ध होने से कीमतों में भारी बढ़ोत्तरी नहीं होगी। वर्ष 2015 में वैश्विक चावल उत्पादन 0.7 फीसदी गिरकर 49.14 करोड़ टन रहने का अनुमान है, जो पिछले साल 49.47 करोड़ टन था।

ई-ऑक्शन से चाय की खरीद-बिक्री

21 जून से देश के किसी इलाके से माउस क्लिक करके प्रीमियम दार्जिलिंग टी खरीदी जा सकती है। देश में अब ई-ऑक्शन सिस्टम के जरिए चाय खरीद सकते हैं। अभी तक 28 लाख किलो दार्जिलिंग टी की नीलामी और ट्रेडिंग मैनुअली हुआ करती थी। सीटीसी, डस्ट और ऑर्थोडॉक्स जैसी दूसरी चाय भी अब ई-ऑक्शन प्लेटफॉर्म पर बेची जा रही है। अभी देश में छह रजिस्टर्ड ई-ऑक्शन सेंटर कोलकाता, सिलीगुड़ी, गुवाहाटी, कोयम्बटूर, कुन्नूर, कोचीन हैं। ई-ऑक्शन सिस्टम के जरिए करीब 53. 40 करोड़ किलो चाय बेची जाती है। भारत में हर साल करीब 120 करोड़ टन चाय का उत्पादन होता है। इलेक्ट्रॉनिक ऑक्शन सिस्टम का संचालन ऑक्शन सेंटर्स करते हैं, लेकिन इस प्रक्रिया में अड़चने हैं, अलग-अलग सेटर्स के अपने अलग-अलग ऑक्शन नियम होने की वजह से खरीदार के लिए मामला पेचीदा हो जाता है।

किसान कोष के लिए राष्ट्रपति की सिफारिश

देश के तमाम इलाके इस समय सूखे के संकट से जूझ रहे हैं। ऐसे में राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने राज्य सभा सदस्य अहमद पटेल के निजी विधेयक पर विचार करने की सिफारिश की है। विधेयक में किसानों के लिए एक कल्याण कोष गठित करने की मांग की गई है, जिससे सूखा प्रभावित इलाकों के किसानों की मदद की जा सके। कांग्रेस के वरिष्ठ नेता और राज्य सभा सदस्य अहमद पटेल ने यह विधेयक पेश किया है। दिसंबर 2014 में पटेल ने राज्य सभा में शुष्क एवं मरुस्थलीय क्षेत्र के कृषक विधेयक 2014 पेश किया था। प्रस्तावित कल्याण कोष में भारत की संचित निधि से धन दिया जाना है। मसौदा विधेयक में केंद्र सरकार की ओर से 10,000 करोड़ रुपए की शुरुआती पूंजी का प्रस्ताव किया गया है। इसमें अनुमान लगाया गया है कि इस मकसद के लिए प्रतिवर्ष 20,000 करोड़ रुपए आवर्ती व्यय हो सकता है। भारत के संचित निधि से 5000 करोड़ रुपए गैर आवर्ती व्यय भी हो सकता है।

कपास की कीमतों में बढ़ोत्तरी

चालू फसल वर्ष में कपास के उत्पादन में भारी कमी के अनुमानों के बाद इसके दाम पांच फीसदी से अधिक बढ़ चुके हैं। गुजरात मंडी में कपास की बेंचमार्क किस्म संकर 6 के भाव 34,600 रुपए प्रति कैंडी बोला गया। कपास के अन्य उत्पादक और उपभोक्ता क्षेत्रों में भी कपास की कीमतों में बढ़ोत्तरी दर्ज की गई है। हालांकि कपास की कीमतों में यह बढ़ोत्तरी अस्थायी है, लेकिन इससे कपड़ा और परिधान विनिर्माताओं का मुनाफा मार्जिन बुरी तरह प्रभावित होगा। कपड़ा मिलें पहले ही कमजोर मांग के भारी दबाव से गुजर रही हैं। अब उन्हें कच्चे माल की कीमतों में बढ़ोत्तरी का सामना करना पड़ेगा, जिससे उनकी वित्तीय स्थिति खराब हो सकती है।

दूसरी तरफ देश आज आयातित हाइब्रिड कपास तकनीक पर निर्भर है। लेकिन अब भारतीय कंपनियां इस असफल तकनीक की जगह नई वैकल्पिक प्रौद्योगिकी को विकसित करने के लिए शोध संस्थानों के साथ हाथ मिला रही हैं। बीज उद्योग के मुताबिक वैकल्पिक प्रौद्योगिकी अब किसानों को प्रतिस्पर्धा कीमतों और उपज के विकल्प मुहैया कराने के लिए अहम हो गई है। मसलन, भारत की सात प्रमुख बीज कंपनियों द्वारा स्थापित की गई एक संयुक्त उद्यम कंपनी स्वर्ण भारत बायोटेक्नीक प्राइवेट लिमिटेड ने केंद्रीय कपास शोध संस्थान की सहयोगी इकाई नेशनल बोटेनिकल रिसर्च इंस्टीट्यूट के साथ हाथ मिलाया है। इस संयुक्त उद्यम द्वारा भारतीय बीटी तकनीक का विकास कार्य पूरा हो चुका है और उम्मीद जताई जा रही है कि वर्ष 2018 के खरीफ सीजन में इस नए बीज का लांच संभव है।

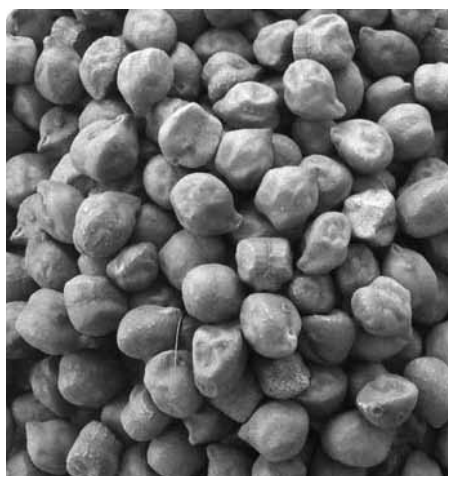

चने के उत्पादन में कमी

राजस्थान में इस वर्ष चने का उत्पादन घटकर करीब आधा ही रह गया है। मॉनसून की कमजोरी के चलते प्रदेश में चने की बिजाई काफी कम हुई थी। चने के कुछ इलाकों में तो पानी की कमी के चलते बिजाई ही नहीं हो पाई थी। वहीं फसल के समय मौसम के भी गर्म रहने के कारण उत्पादन काफी कमजोर रहा है। जिसके चलते भविष्य में चने के भावों में तेजी रहने के आसार हैं।

राजस्थान में गत वर्ष 12 लाख टन चने का उत्पादन हुआ था। प्रदेश के व्यापारियों का अनुमान है कि इस वर्ष चने का उत्पादन घटकर मात्र 6-6.5 लाख टन रहेगा। प्रदेश के कृषि विभाग की ओर से चने का बिजाई लक्ष्य 12.56 लाख हेक्टेयर से बढ़ाकर 14.50 लाख हेक्टेयर

और इसका उत्पादन लक्ष्य 9.10 मैट्रिक टन से बढ़ाकर 12.33 मैट्रिक टन किया गया था जो पूरा होता नजर नहीं आ रहा है।

चीनी उत्पादन में कमी

उत्तर प्रदेश में चालू पेराई सत्र 2015-16 में चीनी उत्पादन पिछले साल के मुकाबले कमजोर रहने का अनुमान है क्योंकि पेराई सत्र समाप्ति की ओर बढ़ रहा है। पिछले साल उत्तर प्रदेश में चीनी उत्पादन लगभग 69.60 लाख टन पर रहा जबकि इस साल अब तक यह 67.90 लाख टन है। कुछ ही निजी मिलों के परिचालन में बने रहने की वजह से पेराई सत्र इस महीने के अंत तक समाप्त हो सकता है। इस उद्योग से जुड़े लोगों का कहना है कि इस साल उत्तर प्रदेश में चीनी उत्पादन पिछले साल के स्तर से थोड़ा कम रहने का अनुमान है। वह 2014-15 के सत्र की तुलना में 1.5 लाख टन कम रह सकता है। इस साल पेराई सत्र में शामिल हुए कुल 118 चीनी मिलों में से 111 मिलें अपने संबद्ध इलाकों में गन्ने की आपूर्ति सुस्त पड़ने के बाद अपना परिचालन समाप्त कर चुकी हैं। उत्तर प्रदेश चीनी क्षेत्र पर 94 मिलों के साथ निजी क्षेत्र का दबदबा है जिसके बाद सहकारी मिलों 24 और उत्तर प्रदेश स्टेट शुगर कॉरपोरेशन लिमिटेड का स्थान है। हालांकि इस साल 10. 60 प्रतिशत पर चीनी की रिकवरी दर पिछले साल के 9.54 फीसदी की तुलना में बेहतर है। रिकवरी दर प्रति यूनिट गन्ने की पेराई से तैयार चीनी के आंकड़े से संबद्ध है।

फसल ऋण पर सब्सिडी की समीक्षा

कृषि क्षेत्र के लिए नौ लाख करोड़ रुपए की ऋण योजना के बेहतर तरीके से क्रियान्वयन पर सुझाव देने के लिए गठित सरकारी समिति ने सुझाव दिया है कि तीन लाख से अधिक के अल्पकालिक ऋण पर ब्याज छूट नहीं दी जानी चाहिए। समिति ने यह भी सुझाव दिया है कि सब्सिडी पूरी भुगतान अवधि के लिए दी जानी चाहिए न कि सिर्फ एक साल के लिए। कृषि मंत्रालय ने नाबार्ड के पूर्व चेयरमैन वीसी सारंगी की अध्यक्षता में फसल ऋण जरूरतमंत छोटे तथा सीमांत किसानों तक पहुंचाने और ब्याज छूट योजना का बेहतरीन उपयोग सुनिश्चित करने के लिए नौ सदस्यों की एक समिति का गठन किया है।

गेहूं की अच्छी खरीद

चालू रबी बाजार सीजन में सरकारी एजेंसियों ने 2 मई, 2016 तक किसानों से 208.11 मीट्रिक टन गेहूं की खरीद की। पहले के बाजार सीजन यानी 2015-16 में 189.27 लाख मीट्रिक टन गेहूं खरीदा गया था। इस तरह क्रमिक प्रगति की दृष्टि से पिछले वर्ष की तुलना में अब तक 18.84 लाख मीट्रिक टन अधिक गेहूं खरीदा गया है। गेहूं की खरीद सबसे अधिक पंजाब में 98.94 लाख मीट्रिक टन हुई। हरियाणा में 64. 64 लाख मीट्रिक टन गेहूं खरीदा गया। किसानों से गेहूं खरीदने के मामले में मध्य प्रदेश ने भी आगे बढ़ते हुए 36.05 लाख मीट्रिक टन गेहूं की खरीद की। पिछले वर्ष के 280.87 लाख मीट्रिक टन की कुल खरीद की तुलना में क्रमिक प्रगति की दृष्टि से गेहूं की अच्छी खरीद हुई है।

पानी की सही रिकॉर्ड की व्यवस्था

देश में अभी कई हिस्सों में सूखे की हालत है। इससे निपटने के लिए अब कमर कसा जा रहा है। हरियाणा सरकार ने यह प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना के अंतर्गत यह पता लगाने का काम शुरू कर दिया है कि किस फसल की सिंचाई में कितना पानी खर्च हो रहा है। इसका रिकॉर्ड तैयार करेगा। ताकि यह पता चले कि कहां पानी की खपत अधिक हो रही है। गौरतलब है कि सोनीपत जिले में पिछले कुछ वर्षों से किसान कपास, गन्ना जैसी परंपरागत खेती को छोड़कर धान जैसी व्यावसायिक खेती की तरफ अधिक बढ़ रहे हैं। अनियंत्रित रूप से फसलों की सिंचाई करने से बर्बाद हो रहे पानी के चलते भूजल स्तर पर भी प्रतिकूल असर पड़ रहा है। इसके चलते जिले के कई क्षेत्रों में फसलों की पर्याप्त सिंचाई न होने की समस्या खड़ी हो गई है ऐसे में कृषि विभाग प्रधानमंत्री सिंचाई योजना के अंतर्गत फसलों की सिंचाई में होने वाले पानी के खर्च का सही आंकड़ा तैयार करके समस्या के समाधान का प्रयास कर रहा है।

अमेरिकी सेब की ज्यादा मांग

उपभोक्ता को इस वर्ष वाशिंगटन सेब के लिए 25 फीसदी ज्यादा दाम चुकाना पड़ सकता है। क्योंकि यह अमेरिकी राज्य इन लाल क्रंची और जूसी सेबों का कम एक्सपोर्ट करेगा। इसकी वजह यह है कि इनका उत्पादन इस साल घटा है। कम सप्लाई की वजह से अमेरिका में सेब के दाम पहले से ही 15 फीसदी चढ़ चुके हैं। वाशिंगटन एपल कमीशन के अनुसार अगस्त 2015 से शुरू होने वाले दाम पहले से ही उत्पादन घटकर 11.6 करोड़ बॉक्स पर आ गया है जो 2014 में 14 करोड़ बॉक्स था। वाशिंगटन एपल का हार्वेस्टिंग सीजन अगस्त में शुरू होता है और अगले साल जुलाई तक चलता है। पिछले साल वाशिंगटन एपल के 55 लाख बॉक्स इंडिया भेजे गए थे। मेक्सिको और कनाडा के बाद इंडिया वाशिंगटन एपल का तीसरा सबसे बड़ा बाजार है।

कृषि वास्तविक वृद्धि दर रहेगी 1.1 फीसदी

देश की वास्तविक कृषि सकल मूल्यवर्धन वृद्धि दर 2015-16 में बढ़कर 1.1 फीसदी रहने का अनुमान है। एक रिपोर्ट के मुताबिक पिछले साल सामान्य से कम मानसून के बावजूद कृषि वृद्धि बढ़ेगी। जापान की वित्तीय सेवा क्षेत्र की प्रमुख कंपनी नोमूरा ने कहा कि कृषि क्षेत्र में मौजूदा विविधीकरण से कृषि उत्पादन और कृषि आय में उतार-चढ़ाव घटा है। इसमें कहा गया है कि कृषि क्षेत्र में बदलाव आया है। पहले यह मुख्य रूप से खाद्यान्न गेहूं और चावल के प्रभुत्व वाला क्षेत्र था। अब इस क्षेत्र में बागवानी और पशुपालन आदि का भी महत्व भी बढ़ा है। रिपोर्ट

में कहा गया है कि खाद्यान्न उत्पादन पर समय के साथ निर्भरता कम होने से कृषि जीडीपी की वृद्धि दर में उतार-चढ़ाव घटा है।

झमाझम होगी बारिश

भारतीय मौसम विभाग के महानिदेशक एलएस राठौर का कहना है कि मानसून को लेकर उठ रही आशंकाएं निराधार हैं। चालू सीजन में झमाझम बारिश होगी। मौसम विभाग ने हरियाणा, पंजाब सहित पश्चिमोत्तर भारत में 108 फीसदी बारिश का दावा किया है। वहीं केन्द्रीय और दक्षिण भारत में 113 फीसदी बारिश का अनुमान है। जबकि पूर्वोत्तर क्षेत्रों में सामान्य से कम बारिश हो सकती है।

गौरतलब है देश के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि क्षेत्र की हिस्सेदारी 15 फीसद है जबकि देश की 60 फीसद आबादी खेती पर निर्भर करती है। देश की मात्र 40 फीसदी कृषि ही सिंचित है। बाकी सारी कृषि मानसून पर आधारित है। पिछले दो वर्षों के खराब मानसून से कृषि क्षेत्र पर बुरा असर पड़ा है और 10 राज्यों में सूखा घोषित किया गया है। इससे निपटने के लिए तकरीबन 10 हजार करोड़ रुपये की राहत राशि राज्यों को दी है। भूजल के लगातार नीचे जाने से पेयजल का संकट पैदा हो गया है।

दलहन का समर्थन मूल्य हुआ आकर्षक

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता वाली आर्थिक मामलों की मंत्रिमंडलीय समिति की बैठक में कृषि मंत्रालय की सिफारिशों को मंजूरी दे दी गयी है। बैठक में जहां दाल की कमी को पूरा करने के लिए दलहन खेती को पर्याप्त समर्थन देने की बात कही गयी है, वहीं तिलहन और अन्य फसलों के लिए आकर्षक समर्थन मूल्य में सहमति बनी है। सरकार ने दलहन फसलों के समर्थन मूल्य पर 425 रुपये का बोनस देने का ऐलान किया है, जबकि न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) में पिछले साल के बोनस को जोड़ दिया गया है। वहीं तिलहन पर 200 रुपये प्रति क्विंटल तक का बोनस देने का फैसला किया गया है।

अब अरहर का समर्थन मूल्य बोनस सहित 5050 रुपये प्रति क्विंटल हो गया है जो पिछले साल के मुकाबले 425 रुपये अधिक है। मूंग का समर्थन मूल्य 375 रुपये बढ़कर 5225 रुपये प्रति क्विंटल हो गया है। उड़द का समर्थन मूल्य 4625 से बढ़कर 5000 रुपये प्रति क्विंटल हो गया है। सरकार का मानना है कि समर्थन मूल्य में वृद्धि को देखते हुए किसान दलहन फसलों की ओर आकर्षित होंगे।

चालू वित्तीय में 270.10 मिलियन टन अनाज उत्पादन का लक्ष्य

वर्ष 2016-17 में 108.50 मिलियन टन चावल उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है, जबकि गेंहू के लिए यह 96.50 मिलियन टन है। सभी प्रकार की दालों के लिए उत्पादन लक्ष्य 20.75 मिलियन टन रखा गया है, जबकि तिलहन के लिए यह 35 मिलियन टन है। गन्ने के लिए 355 मिलियन टन का लक्ष्य रखा गया है।

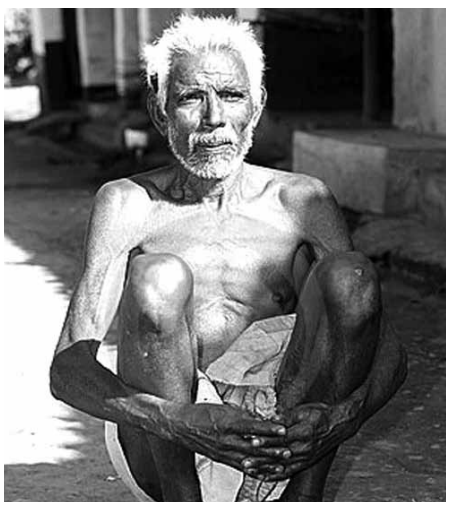

बेबसी का शिकार बुढ़ापा

अब शहरों में ही नहीं गांवों में भी बुढ़ापा अकेला पड़ गया है। नये दौर की परिवार और समाज व्यवस्था ने जीवन के आखिरी दिनों में बुजुर्गों को दो वक्त की रोटी के लिए मोहताज कर दिया है। सामाजिक सुरक्षा और वरिष्ठ नागरिकों के लिए चल रही तमाम सरकारी स्कीमों के बावजूद गांवों में अभी भी दो-तिहाई बुजुर्ग पेट की आग बुझाने के लिए मजदूरी करने को मजबूर हैं। शहरों का हाल भी कम बुरा नहीं है।

वर्ष 2011 की जनगणना बताती है कि गांवों में भी बुढ़ापा अकेला पड़ गया है। देश के ग्रामीण इलाकों में कुल बुजुर्गों में से करीब 66 फीसद ऐसे हैं जो पूरी तरह दिहाड़ी मजदूरी पर दिन गुजारने को मजबूर हैं। बुजुर्ग महिलाओं में करीब 28 फीसद को भी ऐसे ही हालात से गुजरना पड़ रहा है। आंकड़े बताते हैं कि आजीविका कमाने की मजबूरी के मामले में भारत में पुरुष बुजुर्गों के मुकाबले महिलाओं की संख्या तेजी से बढ़ रही है। ग्रामीण भारत में 2001 में पुरुष बुजुर्गों में 65.6 फीसद अपनी रोजी-रोटी कमा रहे थे, जबकि ऐसी बुजुर्ग महिलाओं की संख्या 24.9 फीसद थी। दूसरी तरफ 2001 में शहरी क्षेत्रों में मेहनतकश पुरुष बुजुर्गों की संख्या 44.1 फीसद थी, जबकि महिलाएं केवल 9 फीसद थीं। चिंता की बात यह है कि मात्र दस साल बाद 2011 में गांवों में मजदूरी करने वाली बुजुर्ग महिलाओं की संख्या 28.4 और शहरों में 11.3 फीसद पहुंच गयी। कुल बुजुर्गों की संख्या बढ़ने के मामले में भी महिलाएं पुरुषों से आगे आ गयी हैं।

2011 की जनगणना के मुताबिक ऐसे बुजुर्गों में 53 फीसद पूर्णकालिक श्रमिक या मजदूर हैं। केवल 13.5 बुजुर्ग ऐसे हैं जो आंशिक या दिहाड़ी मजदूर हैं। लगभग यही अनुपात महिलाओं का भी है। साक्षरता के मामले में कुल पुरुष बुजुर्गों में से 59 फीसद पुरुष साक्षर हैं, जबकि महिला बुजुर्गों में साक्षर महिलाओं की हिस्सेदारी केवल 28 प्रतिशत है। ●

खरीफ समर्थन मूल्य
(रुपये प्रति क्विंटल में)

फसल	बढ़ोतरी	नया एमएसपी
धान (कॉमन)	60	1470
अरहर	425	5050
मूंग	375	5225
उड़द	375	5000
रागी	75	1725
ज्वार	60	1650
बाजरा	55	1330
मक्का	40	1365
कपास	60	3860 (मीडियम)
मूंगफली	190	4220
सोयाबीन	175	2775

जल, आज और कल

जल की महिमा का बखान एक गीत में इस प्रकार किया गया है- 'जल न होता तो ये जग जाता जल।' आज सचमुच दुनिया जलने के कगार की ओर बढ़ रही है। तमाम दूरद्रष्टा यह कह भी चुके हैं कि तीसरा विश्व-युद्ध पानी के लिए होगा। इस साल के जबर्दस्त सूखे ने भारत के एक बड़े भूभाग में लोगों को बूंद-बूंद पानी के लिए तरसा कर रख दिया। इसके साथ ही पानी को लेकर हमारी जमीनी हकीकत और इंतजाम की कलई भी खुल गयी। यदि हम अब भी न चेते तो यह नासमझी ही नहीं मूर्खता भी कहलाएगी।

■ महेन्द्र बोरा

छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री डॉ. रमन सिंह की यह अपील कि किसान भाई इस गर्मी में धान की फसल न उगायें। धान की बजाय कम पानी में होनी वाली अन्य फसलें उगायें -यहां काबिलेगौर है। एक किलो धान पैदा करने में तीन-चार हजार लीटर पानी की जरूरत पड़ती है। इस प्रकार धान की खेती का मतलब हुआ धरती के गर्भ का पानी चूस डालना।

गौर करें तो पता चलता है कि आजादी के तुरंत बाद वर्ष 1950-51 से लेकर 1959-60 तक हमारे देश में एक भी ट्यूबवेल नहीं था। तब हमारी कुल सिंचित भूमि 24.04 प्रतिशत थी। जिसमें 10.114 प्रतिशत नहरों, 4.631 तलाबों, 7.083 कुओं तथा 2.209 प्रतिशत पानी के

देवास मॉडल को अपनाने की जरूरत

उमाकांत उमराव को लोग जिलाधीश की बजाय जलाधीश (जल का देवता) कहकर बुलाते हैं। नहीं तो मध्य प्रदेश का देवास जिला महाराष्ट्र के विदर्भ की राह पर चल पड़ा था। उमराव जब देवास के डीएम बनकर आये तो प्रशासन क्या चलाते, जिले में तो पानी का हाहाकार मचा था। पेयजल के साथ-साथ खेती-किसानी चौपट हो चुकी थी। सौ-सौ एकड़ वाले किसान तक कर्ज में डूबे थे। बहुत ही मुश्किल काम था। ऐसे में उमराव ने जल संरक्षण को मुख्य मुद्दा बनाकर काम करना शुरू कर दिया।

इनमें कुछ ऐसे किसान भी थे जिनके खुद के तालाब थे और उन्होंने पिछले कुछ सालों से जल समस्या का सामना नहीं किया था। इनको रोल मॉडल बनाकर उमराव ने दस बड़े किसानों को उनके खेत में तालाब बनवाने के लिए राजी किया। उन्होंने जल संरक्षण के नारे 'जल बचाओ-जीवन बचाओ' को 'जल बचाओ-लाभ कमाओ' में तब्दील कर दिया। देखते ही देखते सैकड़ों लोगों ने इस मॉडल पर काम करना शुरू कर दिया। इसमें किसान को जमीन के 10 फीसदी हिस्से पर तालाब बनाना होता था और उसका टेक्निकल सहयोग सरकार देती थी और लागत किसान को वहन करनी होती थी। दो साल बाद ही जब इसकी सफलता से लोग रूबरू हुए, तो किसान स्वयं आगे बढ़कर तालाब की संस्कृति में शामिल हो गए। आज वहां खुशहाली लौट आयी है और न केवल जीविकोपार्जन एवं रोजगार में सुधार हुआ है, बल्कि शिक्षा एवं स्वास्थ्य का स्तर भी बढ़ गया है। आज कई गांवों में तो 100 से 150 तालाब हैं।

अन्य स्रोतों का योगदान था। सन् 1960 से देश में 'हरित क्रांति' की शुरुआत होती है, क्योंकि बढ़ती जनसंख्या का पेट भरने के लिए खाने के लाले पड़े थे। यहीं से देश में विदेशी संकर बीजों, रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का चलन शुरू हुआ। यह प्रयोग सबसे पहले हरियाणा, पंजाब और उत्तर प्रदेश में शुरू किया गया। इन बीजों से अच्छा उत्पादन लेने के लिए भारी मात्रा में पानी की जरूरत थी। इसलिए सरकार ने तमाम उपाय किये, सिंचाई के कई बड़े प्रोजेक्ट शुरू किये और साथ ही ट्यूबवेल का जोर पकड़ा। ट्यूबवेल मतलब धरती के गर्भ से पानी निचोड़ने की मशीन।

अब दस साल आगे चलते हैं। वर्ष 1967-70 में सिंचाई के साधनों में हमारे पास कुल 12.838 प्रतिशत नहरें थीं, 4.059 प्रतिशत तालाब, 3.739 ट्यूबवेल, 7.438 कुएं और 2.356 पानी के अन्य स्रोत थे। इस प्रकार कुल सिंचित क्षेत्र 30.2 प्रतिशत था। यानी इन दस सालों में 10 प्रतिशत अधिक भूमि में सिंचाई होने लगी।

इसके बाद सीधे 2008-09 पर चलते हैं जहां तक के आंकड़े उपलब्ध हैं। यहां 16.596 प्रतिशत नहरें, 1.979 प्रतिशत तालाब, 26.013 प्रतिशत ट्यूबवेल, 12.563 कुएं, 6.045 अन्य स्रोत मिलाकर कुल सिंचित क्षेत्र 63.2 प्रतिशत हो गया।

इन आंकड़ों की समीक्षा साफ बताती है कि 60 के दशक से हमारा सारा ध्यान ट्यूबवेल खोदने पर रहा। हमने खेतीबाड़ी के एक बड़े भूभाग को ट्यूबवेल के भरोसे छोड़ दिया। आजादी के लगभग 70 सालों में हम नहरों को दुगुना से आगे नहीं बढ़ा पाये। कभी पानी से लबालब रहने वाले तालाब हमने उजाड़ डाले। बेहद आसान और सुविधाजनक रास्ता अपना लिया ट्यूबवेल का। पानी खींचकर धरती अंदर से खोखली कर डाली।

हाल में किये गये एक अध्ययन के अनुसार देश के विभिन्न कुओं के जलस्तर में 47 प्रतिशत की कमी आयी है। कुओं के जलस्तर में कमी आने का सीधा अर्थ है कि देशव्यापी स्तर पर भू-जल स्तर 47 फीसदी तक गिर गया है। देश के प्रमुख 91 जलाशयों के पानी में भी लगभग 25 फीसदी तक की गिरावट दर्ज की गयी है। केन्द्रीय जल संसाधन मंत्रालय के मुताबिक अप्रैल माह के प्रथम पखवाड़े तक इन जलाशयों की क्षमता 157.79 अरब घन मीटर के मुकाबले केवल 122.16 अरब घन मीटर ही उपलब्ध है। पानी की कम उपलब्धता के मामले में मंत्रालय का मानना है कि विगत वर्ष के मुकाबले इस वर्ष इस दौरान पानी की उपलब्धता 33 फीसद कम दर्ज की गयी है। पिछले दस वर्षों के औसत से इस जल की उपलब्धता की तुलना करें तो इसमें 23 प्रतिशत की कमी आयी है। राजस्थान के 33 में से 19 जिले वर्तमान में पानी की कमी से जूझ रहे हैं।

अब जब पिछले तीन सालों में गर्मी और सूखे ने हमारी खाल सुखा डाली है, गला सूख चुका है, धरती पपड़ी बन गयी है, किसान खुद को मिटाने पर तुल गये हैं तो सरकारों के हाथ-पांव फूलने लगे हैं। ऐसे में अचानक कहां से आये पानी। पानी को तो संभाल कर रखना पड़ता है। रहीमदास जी यूं ही थोड़े कह गये थे-

रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून।

सूखा पहली बार पड़ा हो ऐसा भी नहीं है। महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश तथा आंशिक तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में बिखरा बुंदेलखंड क्षेत्र विगत लगभग एक दशक से सूखे से जूझ रहे हैं। आज जो हालात हैं वे एक दिन या फिर एक मौसम-चक्र के चलते नहीं हुए हैं। अधिकतर नदियां हिमालय से निकलती हैं, परंतु इन नदियों में अनेक नदियां बिना ग्लेशियर वाली हैं। वे नदियां जो ग्लेशियर से नहीं निकलती हैं बरसात के भरोसे होती हैं। देश के अन्य हिस्सों में भी अनेक नदियां हैं जो छोटे-छोटे स्रोतों से मिलकर बनती हैं, जिनमें से अनेक नदियां लगभग सूख चुकी हैं। बाद में ये नदियां गंगा, युमना, महानदी, शारदा, कृष्णा, सतलुज, झेलम, ब्रह्मपुत्र आदि बड़ी नदियों में समा जाती हैं। इसी प्रकार ब्रह्मपुत्र, सतलुज, सिंधु, झेलम आदि नदियां भी मध्य व उच्च हिमालय के विभिन्न ग्लेशियरों तथा झीलों-सरोवरों से निकलती हैं। दक्षिण भारत एवं पश्चिम भारत की नदियों के अलावा भारत की सभी नदियां किसी न किसी सरोवर, झील या ग्लेशियर से निकलती हैं तथा सदानीरा हैं।

ऐसे में सरकार की 'नदी जोड़ो योजना' काफी कारगर साबित हो सकती है। नरेन्द्र मोदी जब गुजरात के मुख्यमंत्री थे तब उन्होंने राज्य के सौराष्ट्र और कच्छ में पड़ने वाले सूखे से निपटने के लिए नर्मदा नदी का पानी पाइप लाइन बिछाकर इन स्थानों में भिजवाया।

दरअसल सूखा और पेयजल की एक-दूसरे जुड़ी हुई समस्याएं हैं, परंतु यह मानना कि उपलब्ध जल का 75 प्रतिशत हिस्सा केवल खेतीबाड़ी पर ही खर्च होता है। जल संसाधनों के वितरण और प्रबंधन पर एक नये सिरे से सर्वेक्षण की आवश्यकता है, ताकि यह पता चल सके कि पानी की सबसे ज्यादा और पहली जरूरत कहां तथा किसे है। साथ ही यह भी पता लगाया जाना चाहिए कि जल संसाधनों का सबसे ज्यादा उपयोग तथा बर्बादी कौन और कहां कर रहे हैं। इस पर नये सिरे से नीति बनानी चाहिए। ●

साध्वी उमा भारती
केन्द्रीय जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा सफाई मंत्री

किसान खेती में फर्टिलाइजर के लिए पैसे देते हैं, बिजली के लिए पैसे देते हैं, तो पानी के लिए क्यों नहीं? मॉनसून सत्र में वॉटर बिल आएगा और कमर्शियल खेती में पानी के लिए पैसा लगेगा।

आजादी के बाद पहली बार नदियां जोड़ी जाएंगी। केन-बेतवा भारत का पहला रिवर लिंक होगा। केन-बेतवा के अलावा प्रद्युमन गंगा भी जोड़ी जाएगी। पिंजल, ताप्ती-नर्मदा के लिए भी प्रस्ताव है।

नाना पाटेकर
सुप्रसिद्ध रंगकर्मी

मोदी सरकार के दो साल के कामकाज पर विज्ञापन खर्च 1000 करोड़ और मेरे महाराष्ट्र के किसानों का कर्ज 700 करोड़, जिसकी वजह से वे रोज आत्महत्याएं कर रहे हैं। यदि उपलब्धियां जमीनी स्तर पर होतीं तो 1000 करोड़ रुपये के विज्ञापन करके ढिंढ़ोरा नहीं पीटना पड़ता। इतने पैसे में सरकार दो राज्यों के किसानों का कर्ज माफ कर सकती थी, ताकि बचे हुए अन्नदाता जिंदा रह सकें।

सूखे के मौसम में पानी-पानी सरकारें

सूखे को लेकर राजनीति का आलम यह है कि केन्द्र सरकार और उसके अधीन राज्य सरकारें आमने-सामने हैं। हर कोई अपनी ढपली-अपना राग झेड़ रहा है। होड़ पब्लिसिटी पाने की है, चाहे वह गैर-जिम्मेदाराना बयान देकर ही क्यों न आए।

■ **गणेश चंद्र पांडे**

उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश, ओडिसा, झारखंड, छत्तीसगढ़, उत्तराखंड, बिहार, गुजरात, पंजाब तथा हरियाणा पिछले 100 सालों से सबसे भीषण सूखे से जूझ रहे हैं। पंजाब तथा हरियाणा को केन्द्र सरकार सूखाग्रस्त घोषित करने में हालांकि संकोच कर रही है। वास्तविकता यह है कि ये दोनों राज्य सिंचाई सुविधाओं से संपन्न होने के कारण सूखे की मार से थोड़ा-बहुत लड़ सकते हैं।

सूखे को लेकर शीर्षस्थ अदालत में भी मामला चल रहा है और शीर्षस्थ न्यायालय अपनी न्यायिक सक्रियताओं के चलते सूखे की स्थितियों की एक तरह से निगरानी कर रहा है। सूखे की विभीषिका का सबसे काला पक्ष यह रहा कि पिछले दिनों इस मामले पर शीर्षस्थ न्यायालय में न्यायमूर्ति मदन सीलोकुद और एनवी रमना की द्विपक्षीय खंडपीठ जब सुनवाई कर रही थी तो वहां सूखे पर केन्द्र सरकार का पक्ष रखने के लिए केन्द्र सरकार का कोई अधिकृत अधिवक्ता तक मौजूद नहीं था। गौरतलब है कि विभिन्न न्यायालयों में सरकारों का पक्ष रखने के लिए महाधिवकक्ताओं, अधिवक्ताओं की फौज होती है। परंतु देश के शीर्षस्थ न्यायालय में जब सूखे जैसी भीषण त्रासदी और संवेदनशील मामले पर सुनवाई जारी थी तो वहां केन्द्र सरकार का पक्ष रखने के लिए सिर्फ एक कनिष्ठ अधिवक्ता मौजूद था।

हद तो यह है कि सूखे जैसी त्रासदी पर भी राजनेताओं को श्रेय-प्रेय का खेल सूझ रहा है। महाराष्ट्र की जल संरक्षण मंत्री पंकजा मुंडे जब लातूर क्षेत्र में सूखे का जायजा लेने गयीं तो उन्होंने वहां पर अपने मोबाइल से सूखे के साथ सेल्फी लेकर यह जता दिया कि हमारे राजनेता देश की आम जनता के प्रति कितने संवेदनहीन हो चुके हैं। इसी तरह महाराष्ट्र के ही एक और विधायक के लिए हजारों लीटर पानी बर्बाद कर अस्थाई हेलीपैड का निर्माण किया गया और वह भी सूखाग्रस्त क्षेत्र में। तर्क यह दिया गया कि विधायक के हेलाकॉप्टर के उतरते और उड़ते समय धूल न उड़े इसलिए हेलीपैड को तर किया गया। इसी प्रकार की संवेदहीनता का परिचय केन्द्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री राधा मोहन सिंह की भिवंडी यात्रा के दौरान भी देखने को मिला। वहां पर न केवल अस्थाई हेलीपैड को हजारों लीटर पानी से छिड़काव कर ठंडक दी गयी बल्कि हेलीपैड से मुख्य सड़क तक के मार्ग को भी पानी से तर किया गया ताकि मंत्री जी का काफिला धूल से निजात पा सके।

महाराष्ट्र में आईपीएल के मैच कराये जायें या न कराये जायें, इसे लेकर भी काफी कशमकश रही। दरअसल क्रिकेट के मैदानों को मैच खेलने लायक बनाने से पहले मैदान पर पानी का छिड़काव किया जाता है। यह प्रक्रिया मैच खेलने से लगभग एक हफ्ता पहले शुरू हो जाती है। जाहिर है कि इसमें काफी पानी बर्बाद होता है। आईपीएल कमिश्नर राजीव शुक्ला ने तर्क दिया कि क्रिकेट के मैदानों से कहीं ज्यादा पानी गोल्फ के मैदानों को खेलने लायक बनाने में बर्बाद होता है। यानी तर्क-वितर्क केवल इस बात को लेकर हुए कि हमसे ज्यादा पानी तो फलां बर्बाद करता है। इस पर कोई गौर करने को राजी नहीं है कि पानी का प्राथमिकता के अनुसार उपयोग किया जाये। सूखे को लेकर अजीबोगरीब बयानबाजियां की जा रही हैं। अपने बयानों से सुर्खियां बटोरने के लिए मशहूर हो चुके शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानंद सरस्वती का कहना था कि सांई की पूजा करने से और महिलाओं द्वारा शनि की पूजा करने से महाराष्ट्र में सूखा पड़ रहा है। अलबत्ता यह बात दीगर है कि किसी मठाधीश या आश्रम ने सूखे से राहत के लिए अपनी अकूत संपदा से एक धेला भी अभी तक नहीं दिया है।

सूखे को लेकर राजनीति का आलम यह है कि केन्द्र सरकार और उनके अधीन राज्य सरकारें आमने-सामने हैं। दिल्ली जो कि खुद के लिए पेयजल हेतु पड़ोसी राज्यों पर निर्भर है उसके मुखिया अरविंद केजरीवाल ने बयान जारी कर दिया कि वह प्रतिदिन 100 लाख लीटर पानी लातूर भिजवाना चाहते हैं, लेकिन केन्द्र सरकार ट्रेन मुहैय्या नहीं करा रही है। इसी प्रकार जब बुंदेलखंड में ट्रेन से पानी पहुंचाकर पेयजल समस्या का केन्द्र सरकार द्वारा हल करने के प्रयास किये गये तो उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री अखिलेश यादव ने उस ट्रेन को झांसी में ही रुकवा दिया और कहा कि बुंदेलखंड में खाली ट्रेन पहुंची, उसमें जुड़े वैगनों में पानी की एक बूंद भी नहीं थी। अब यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि केन्द्र सरकार भले ही पानी को लेकर राजनीति कर रही हो, कम से कम वह खाली वैगनों वाली ट्रेन तो बुंदेलखंड नहीं भेजेगी। यानी प्रदेशों के मुख्यमंत्रियों को भी सूखे की समस्या से निपटने में कम और इस समस्या से अपनी राजनीति कैस चमकायी जाये इसमें ज्यादा दिलचस्पी है। ●

प्याज का काम रुलाना ही है

केन्द्रीय खाद्य मंत्री रामविलास पासवान के मुताबिक सरकार ने हर साल 15,000 टन प्याज खरीदने का लक्ष्य रखा है और अभी तक सरकारी एजेंसियां 2,300 टन प्याज खरीद चुकी हैं। वैसे लक्ष्य के मुताबिक यह खरीद सरकार की कछुआ चाल को रेखांकित करती है।

■ **ललित पांडे**

पिछले साल जब प्याज की कीमत 60-70 रुपये हो गयी थी तो ग्राहक रोये थे। तब प्याज के सही दाम न मिलने पर किसान भी रोये। अब प्याज के दाम दस-बीस पैसे से लेकर एक-दो रुपये मिल रह हैं, तो किसानों के आंसू निकल रहे हैं। ग्राहक अब इसलिए रो रहे हैं कि ऐसी स्थिति में भी खुदरा बाजार में प्याज 20-25 रुपये किलो खरीदना पड़ रहा है। क्या सरकार जी, प्याज का काम गरीब और किसानों को रुलाना भर रह गया है? शायद आप भूल रहे हैं कि यह वही प्याज है जो सत्ता बनाता और बिगाड़ता है। सरकार जी, आपका सिंहासन न डोले, इसलिए कोशिश यही कीजिए कि गरीब और किसानों के आंसू न निकल पायें। उस व्यक्ति पर नकेल कसिये, जो प्याज के महंगे-सस्ते होने पर गरीब व किसानों के निकलने वाले आंसुओं को देखकर खुश होता है।

बहरहाल, देश में सूखा पड़ा है। किसान पहले से हैरान-परेशान है। इसके बावजूद इस बार प्याज थोड़ा अच्छा हुआ है तो उसके इसके उचित दाम नहीं मिल रहे हैं। सरकारें खेती को लाभ का धंधा बताती हैं और ज्यादा से ज्यादा लोगों से खेत-खलिहान से जोड़ने की बात करती हैं, लेकिन कृषि उपज के मूल्यों पर सरकारों का कोई नियंत्रण नहीं है। मंडी में आढ़ती किसान को प्याज का 10-20 पैसा या एक-दो रुपये प्रति किलो के हिसाब से दाम देते हैं, जबकि वे स्वयं 10-12 रुपये में इसे आगे बेचते हैं। ऐसे में किसानों को गुस्सा न आये तो क्या आये। मेहनत करें वे, अगर फसल खराब हुई तो नुकसान भरें वे, लेकिन जब लाभ कमाने की बात आये तो आढ़त आगे आ जायें। वे लाभ कमायें इससे किसानों को गुरेज नहीं, लेकिन बदले में वे उन्हें उनकी लागत के बराबर पैसा भी न दें, यह कहां का इंसाफ है। इसी से नाराज होकर नासिक से लेकर इंदौर और देशभर के कई इलाकों में किसानों ने यूं ही सड़कों पर प्याज से भरी ट्रालियां पलट दीं या लोगों को मुफ्त में प्याज बांट दिया।

जानकारों का कहना है कि सरकार का खुदरा कीमतों पर कोई नियंत्रण नहीं है। ऊंची कीमतों के लिए खुदरा विक्रेता जिम्मेदार हैं और यह बात सरकार भी अच्छी तरह से जानती है। हद तो यह कि जिला स्तर के अधिकारीऊंची कीमतों पर खुदरा विक्रेताओं का पक्ष लेते हैं। सतना के जिला मंडी अधिकारी वीरेन्द्र खेड़ा ने पत्रकारों से कहा कि खुदरा कीमतें अधिक होने

खेती-किसानी का डरावना गणित

टन भर प्याज से कमाया फकत एक रुपया

महाराष्ट्र के लासल गांव के किसानों ने इस साल सूखे के बावजूद प्याज की बंपर पैदावार की। अब किसानों को इसे कौड़ी के भाव बेचना पड़ रहा है। कोई उनकी सुध लेने वाला नहीं है। जबकि कई जगहों से किसानों की आत्महत्या की खबरें आ रही हैं।

गांव के ही एक किसान देवीदास की व्यथा किसानों की दयनीय स्थिति को बयां कर देती है। देवीदास पर परिवार के पांच सदस्यों के भरण-पोषण की जिम्मेदारी है। देवीदास ने दो एकड़ जमीन में प्याज की खेती की थी। इस पर 80 हजार रुपये खर्चा आया। 18 बोरों में 952 किलो प्याज भरकर वे बेचने के लिए पुणे की मंडी पहुंचे। उन्हें 16 रुपये प्रति 10 किलो के हिसाब से भुगतान किया गया, यानी 1.60 रुपये प्रति किलो। इस प्रकार उन्हें कुल प्याज के 1,523 रुपये 20 पैसे मिले। इसमें से देवीदास ने प्याज को मंडी तक पहुंचाने के लिए ट्रक वाले को 1,320 रुपये, 91.35 रुपये बिचौलिये का कमीशन, 77.55 रुपये पल्लेदारी और 33 रुपये अन्य खर्च के दिये। इसके बाद उनके पास केवल एक रुपया 30 पैसे बचे।

अब इसके दूसरी तरफ खेतीबाड़ी की वास्तविक तस्वीर देखते हैं। देवीदास ने दो एकड़ में प्याज लगाया। चार महीने तक उसे पाला-पोसा और देखरेख की। बिजली न होने के बावजूद डीजल इंजन से सिंचाई की। कुल मिलकार उपज लेने तक 80 हजार रुपये खर्च हो गये। चार महीने की हाड़तोड़ मेहनत के बाद हाथ में आये 1.30 रुपये। इस हिसाब से चार महीने का समय और मेहनत तो भाड़ में गयी, 79,998 रुपये 70 पैसे की चपत भी लग गयी। एक मामूली किसान कर्ज लेकर खेतीबाड़ी करता है कुछ अच्छा होने की उम्मीद में। इस प्रकार देवीदास के सिर में लगभग पूरा 80 हजार का कर्जा चढ़ गया।

यह है हमारे देश के अन्नदाता की असल हकीकत। ऐसे में किसान आत्महत्या की न सोचे तो क्या सोचे? कभी देश के लोकप्रिय भूतपूर्व प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री जी ने नारा दिया था, 'जय जवान-जय किसान'। वाकई दोनों चुपचाप बिना उफ् किये शहीद हो जाते हैं। एक सुदूर बॉर्डर में तो दूसरा अपने खेत में।

की एक वजह यह भी है कि विक्रेताओं को मंडी में शुल्क व कमीशन देना पड़ता है और उत्पाद के खराब होने पर सारा नुकसान उन्हें ही उठाना पड़ता है। ऐसे अधिकारियों को इसकी कोई परवाह नहीं होती है कि किसानों का अपने प्याज का लागत मूल्य तक मिल रहा है या नहीं।

इंदौर के किसान रवि रतलामी ने बताया कि प्रति एकड़ 100-130 कट्टा प्याज का उत्पादन होता है, जिसमें 25 से 30 हजार रुपये की लागत आती है। लेकिन वर्तमान में मंडी का भाव 100 से 150 रुपये प्रति कट्टा चल रहा है। इतने कम भाव मिल रहे हैं कि किसान की लागत तक नहीं मिल पा रही है। दूसरी ओर यहां से वहां का खेल खेलकर आढ़ती अपनी लागत का दस गुना कमा रहा है।

प्याज के भाव इस तरह औंधे मुंह गिर जाने के पीछे बाजर विशेषज्ञ सरकार द्वारा न्यूनतम निर्यात दर (एमईपी) को 425 डॉलर से बढ़ाकर 700 डॉलर प्रति टन बढ़ाना भी मान रहे हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि इसी वजह से निर्यात गिर गया।

खैर, प्याज की कीमतें भविष्य में अच्छी मिल सकती थीं पर दिक्कत यह है कि ज्यादातर मंडियों में कोल्ड स्टोरेज का घोर अभाव है। इसी के चलते किसानों को अपना प्याज कौड़ी के दाम बेचना पड़ा या मुफ्त में बांटना पड़ा। किसानों की इसी परेशानी का फायदा व्यापारी उठाते हैं और औने-पौने दाम प्याज खरीद लेते हैं।

यहां गौर करने वाली बात यह है कि सरकार तब जागती है जब किसानों का बहुत कुछ लुट चुका होता है। मंडी विशेषज्ञ बताते हैं कि पिछले साल अक्टूबर से ही प्याज के दामों में गिरावट दर्ज होने लगी थी, लेकिन तब सरकार ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया। अब जब ज्यादातर किसान अपना प्याज बेच चुके हैं या फिर उनके पास कम मात्रा में प्याज बचा है तब सरकार को प्याज की सुध आयी है। अब केन्द्र सरकार यह कह रही है कि बफर स्टॉक बनाने के लिए वह सीधे किसानों से प्याज खरीद रही है।

केन्द्रीय खाद्य मंत्री रामविलास पासवान के मुताबिक सरकार ने हर साल 15,000 टन प्याज खरीदने का लक्ष्य रखा है और अभी तक सरकारी एजेंसियां 2,300 टन प्याज खरीद चुकी हैं। वैसे लक्ष्य के मुताबिक यह खरीद सरकार की कछुआ चाल को रेखांकित करती है। यहां दिलचस्प बात यह भी है कि जब प्याज के दाम आसमान छूते हैं तो समूचा विपक्ष हायतौबा मचाने लगता है, लेकिन जब किसानों के लिए अपनी फसल का लागत मूल्य तक निकालना मुश्किल हो रहा है तो विपक्ष ने मुंह सी लिया है।

गौरतलब है कि राष्ट्रीय बागवानी अनुसंधान संस्थान एवं विकास प्रतिष्ठान ने इस साल प्याज का उत्पादन 10-15 फीसदी बढ़कर दो करोड़ टन पार होने की उम्मीद जतायी थी, जो कि बिल्कुल खरी उतरी। लेकिन यही उम्मीद किसानों के लिए अभिशाप बन गयी। तो क्या अगली बार किसान ये उम्मीद करे कि प्याज बेहद कम पैदा हो, ताकि उसका लागत मूल्य वसूल हो जाये। चूंकि वह किसान है, इसलिए वह ऐसी उम्मीद भी नहीं कर सकता। वरना उसका 'अन्नदाता' कहलाने का तमगा छिन जाएगा। ●

मात्र तीन हजार में गोबर गैस प्लांट

शायद आपको यकीन न आये, लेकिन बात सच है। इस अनोखे गोबर गैस प्लांट को ईजाद किया है चिकमंगलूर के कृष्णराजू ने। कृष्णराजू ने मुदिगिरी तालुका के डाराडहली में वरिष्ठ पशु इंसपेक्टर हैं। यह अपने आप में बिल्कुल नया आविष्कार है। ग्रामीण क्षेत्रों के लिए यह आविष्कार वरदान साबित हो सकता है। कृष्णराजू का उद्देश्य भी यही है कि जलावन की लकड़ी के लिए पेड़-पौधे न कटें ताकि हमारा पर्यावरण सुरक्षित रह सके।

इस बायोगैस प्लांट की खासियत यह है कि यह बहुत सस्ता और उपयोग में उतना ही आसान है। केवल एक बाल्टी गोबर इससे चार घंटे गैस का चूल्हा जल सकता है। इस गोबर गैस प्लांट को तैयार करने के लिए केवल एक 11 फिट लंबी, 7 फिट चौड़ी 250 मिमी मोटी की प्लास्टिक शीट तथा दो पीवीसी पाइप की जरूरत होती है। यानी गड्ढा खोदकर टैंक बनाने की जरूरत ही नहीं है। प्लास्टिक शीट से ही टैंक का काम लिया जाता है।

गोबर-पानी के मिश्रण को पीवीसी पाइप द्वारा टैंक में डाला जाता है और एक घंटे के बाद मीथैन गैस का उत्पादन शुरू हो जाता है जो चार घंटे तक चालू रहता है। गैस का इस्तेमाल करने के बाद गाद का उपयोग खाद के रूप में किया जाता है।

कृष्णराजू के मुताबिक गोबर गैस के एक छोटे प्लांट के निर्माण में भी कम से कम 20,000 रुपये की लागत आती है, इसके अलावा वार्षिक रखरखाव में अलग खर्च होता है। लेकिन उनके द्वारा खोजी गयी यह तकनीक काफी सस्ती है और इसके रखरखाव का भी कोई झंझट नहीं है। एक बार स्थापित करने के बाद यह 5-6 साल तक आराम से काम करता है। यदि घर आरसीसी वाला हो तो इस यूनिट को घर की छत पर भी रखा जा सकता है।

कृष्णराजू ने डाराडहली में नरेन्द्र गौड़ा के घर में यह गोबर गैस प्लांट लगाया है। उनकी पत्नी सविता के कहना है कि अपने गाय के गोबर से वह हर रोज पांच घंटे तक गैस का इस्तेमाल करती है। गैस का उपयोग करने के बाद वह गोबर की गाद को पेड़-पौधों में खाद के लिए रूप में करती है।

इस बारे में विशेष जानकारी के लिए श्रीकृष्ण राजू से इस मोबाइल नम्बर पर संपर्क किया जा सकता है- 94480-73711

(साभार: द टाइम्स ऑफ इंडिया)

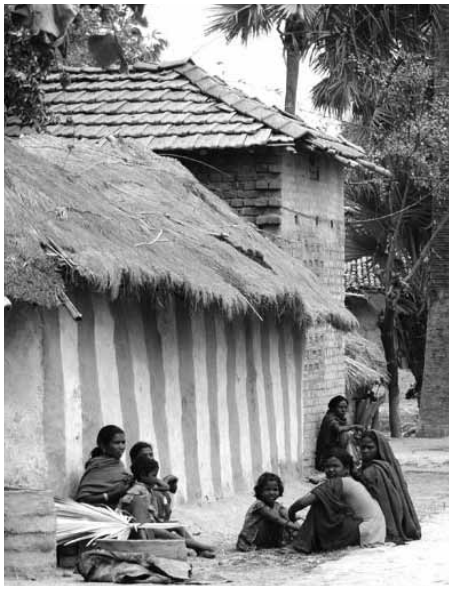

हाशिये पर गांव के गरीब

2014-15 में जहां केरल में मनरेगा के तहत हर ग्रामीण गरीब पर 9,673 रुपये खर्च हुए, वहीं सबसे गरीब राज्यों में शुमार बिहार में महज 165 रुपये खर्च हुए।

■ एनसी सक्सेना

लाखों प्यासे ग्रामीणों और मवेशियों को नजरअंदाज करते हुए आईपीएल मैचों के लिए पानी की आपूर्ति को प्राथमिकता देना हाशिये के बेजुबान ग्रामीण लोगों के प्रति सरकार की असंवेदनशीलता का पहला मामला नहीं हैं। अर्द्ध सूखे क्षेत्रों में गन्ने जैसी अधिक पानी की मांग वाली फसलों की केवल अनुमति ही नहीं देने, बल्कि उसे प्रोत्साहन देने से भूजल की अंधाधुंस निकासी हो रही है। इन सबके चलते देश की 30 प्रतिशत ब्लॉकों में भूजल का अतिशय दोहन हुआ है। इन ब्लॉकों में भूजल रिचार्ज के मुकाबले भूजल निकालने की दर अधिक हो गयी है। समस्या यह है कि सरकारी नीतियों ने कृषि को अधिक जोखिम भरा और पूंजी सघन बनाया है। इसके चलते खेती करने वाले बैंकों और बीमा कंपनियों में अपने लिए ज्यादा आकर्षण उत्पन्न नहीं करते। जल संकट वाले क्षेत्रों में ट्यूबवेल की खुदाई के संबंध में कोई प्रभावी नियंत्रण नहीं है। ऐसे में किसान ट्यूबवेल की खुदाई के लिए साहूकार से ऊंची ब्याज दरों पर ऋण लेते हैं, लेकिन इस तरह की कई बोरिंग के फेल होने की स्थिति में वह कर्ज के जाल में फंस जाते हैं और यह जाल उन्हें अक्सर आत्महत्या की स्थिति तक ले जाता है। बोरवेल अधिक मात्रा में पानी की निकासी करते हैं और आम तौर पर ये उसी स्तर से पानी निकालते हैं जो कुओं के लिए जल का स्रोत होता है। ऐसे में एक गांव में सीमांत किसान सबसे ज्यादा प्रभावित होता है, क्योंकि संपन्न किसान बिजली सब्सिडी का अधिकाधिक लाभ लेते हुए इलेक्ट्रिक मोटर वाला बोरवेल फिट कराते हैं और छोटे किसानों की तुलना में अपनी फसलों के लिए कई गुना अधिक पानी जमीन से निकाल लेते हैं।

2007-12 के दौरान जिस ग्रामीण मजदूरी में महत्वपूर्ण इजाफा हुआ था, उसमें भी वास्तविक अर्थों में 20 प्रतिशत से भी अधिक की गिरावट दर्ज हुई है। यह केवल लगातार दो पिछले सालों में बारिश की कमी के कारण ही नहीं हुआ है, बल्कि निर्माण गतिविधियों में कमी और मनरेगा के तहत कार्य की अनुपलब्धता के चलते हुआ है। मनरेगा के वास्तव में 'फ्री फॉर ऑल' रणनीति पर आधारित होने का नतीजा यह हुआ कि बेहतर ढंग से शासित राज्यों में फंड का अधिक इस्तेमाल हुआ, जबकि इन राज्यों में गरीबी अपेक्षाकृत कम है। मसलन 2014-15 में बिहार में मनरेगा पर कुल खर्च 1,073 करोड़ रुपये हुआ, जबकि तमिलनाडु में यह चार गुना अधिक 3,908 करोड़ रुपये हुआ। वास्तविकता यह है कि तमिलनाडु की तुलना में बिहार में ग्रामीण गरीबों की संख्या छह गुना से अधिक है। इससे ऐसी अनोखी स्थिति उत्पन्न हो गयी कि 2014-15 में जहां केरल में मनरेगा के तहत हर ग्रामीण गरीब पर 9,673 रुपये खर्च हुए, वहीं सबसे गरीब राज्यों में शुमार बिहार में महज 165 रुपये खर्च हुए।

ग्रामीण भारत के सभी वंचित तबकों में से महिलाओं के हितों की तरफ सबसे कम ध्यान दिया जाता है। यहां तक कि सिविल सोसाइटी की तरफ से भी महिलाओं के हितों की ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता। 2005 में उनको कृषि भूमि पर कानूनी अधिकार मिला। उसके बाद भी अभी तक कुछ राज्यों ने ही उसके मुताबिक कानूनों में बदलाव की तरफ ध्यान दिया है। नेशनल सैंपल सर्वे के मुताबिक 15 से 59 आयु समूह की ग्रामीण महिलाओं की कार्य सहभागिता दर 1983 में 34 प्रतिशत से घटकर 2011-12 में महज 26 प्रतिशत रह गयी है। बढ़ते मशीनीकरण के चलते उनके काम का विस्थापन हुआ है। यहां तक बिहार में भी अब कटाई के लिए कंबाइन मशीनों का इस्तेमाल हो रहा है। जंगल के छोटे उत्पादों का पहले महिलाएं संग्रह करती थीं, अब नई वन नीति के चलते उनका यह काम भी खत्म हो रहा है, क्योंकि नई नीति लकड़ी आधारित हो रही है। इसके साथ ही गैर-कृषि कार्य मसलन निर्माण, रिटेल व्यापार और हॉस्पिटैलिटी क्षेत्र में प्रमुख रूप से पुरुषों का वर्चस्व है। गांवों में इस स्थिति की झलक आसानी से दिख जाती है, जहां पुरुष तो आसानी से बाइक पर सवारी करते नजर आते हैं, लेकिन ज्यादातर ग्रामीण महिलाएं यह नहीं जानती कि एक साइकिल की सवारी कैसे की जाए।

70 प्रतिशत से अधिक आदिवासी आबादी देश के मध्य क्षेत्र में रहती है। यह क्षेत्र प्राकृतिक संसाधनों से तो संपन्न है, लेकिन विडंबना यह है कि यही लोग सर्वाधिक गरीब हैं। इन लोगों को अक्सर आदिवासी विरोधी तथा बाजारोन्मुख वन नीतियों का सामना करना पड़ता है। इससे इस क्षेत्र के एकत्रित बायोमास का क्षरण हो रहा है या बिना पर्याप्त पुनर्वास प्रबंध के इनको अपने पुरखों की जमीन से बेदखल होना पड़ रहा है। हालांकि इनकी आबादी कुल जनसंख्या का महज आठ प्रतिशत है, लेकिन बिना इच्छा के जबरन भूमि अधिग्रहण के चलते विस्थापित किये गये लोगों में इनकी हिस्सेदारी 40 प्रतिशत से अधिक है। सरकारी कर्मचारियों की जवाबदेही के अभाव के चलते इन रिमोट और दुर्गम क्षेत्रों में सरकारी नीतियों की कमजोर डिलीवरी देखने को मिलती है।

ग्रामीण लोगों के लिए बनाये गये कई कार्यक्रमों में बुनियादी खामियां हैं। इंटीग्रेटेड चाइल्ड डेवलपमेंट सर्विसेज यानी आईसीडीएस के तहत सप्लीमेंट्री पोषक तत्वों की आपूर्ति में ठेकेदारों की वजह से बड़े पैमाने पर महाराष्ट्र, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश और गुजरात में गड़बड़ियां पायी गयी हैं। मानवाधिकार आयोग के एक अध्ययन के मुताबिक गर्म पका खाना परोसने के सुप्रीम कोर्ट के आदेशों के बावजूद सभी केन्द्रों ने पैकेट वाले खाने की आपूर्ति की, जिसमें केवल 100 कैलोरी थी। 'पौष्टिक आहार' के नाम पर जो परोसा जाता है उसकी खराब गुणवत्ता के चलते उसे 'पशु आहार' कहा जाने लगा है। लेकिन सवाल है कि इन मुद्दों को प्राथमिकता में रखने का सरकार के पास समय कहां है?

-लेखक प्रख्यात अर्थशास्त्री हैं और योजना आयोग के सदस्य रह चुके हैं।

साभार: दैनिक जागरण

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना

किसानों के सवालों के जवाब

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (पीएमएफबीवाई) की घोषणा होते ही हमने पाठकों के लिए 'कृषि चौपाल' के मार्च अंक में विस्तृत लेख प्रकाशित किया था। उस लेख की प्रतिक्रिया में हमें कई किसान भाइयों के पत्र मिले। इस योजना को लेकर उनके मन में अनेक प्रकार की शंकाएं थीं। उन्हें दूर करने के लिए इस बार हम मंत्रालय के सहयोग से हर उस प्रश्न का उत्तर यहां दे रहे हैं, जो संभवतः उनके मन में होंगे।

फसल बीमा क्या है?

फसल बीमा किसानों की फसलों से जुड़े जोखिम की वजह से हो सकने वाले नुकसान से रक्षा करने का माध्यम है। इससे किसानों को अचानक आये जोखिम या खराब मौसम से फसल को हुए नुकसान की भरपाई की जाती है।

इस समय कौन-कौन सी फसल बीमा योजनाएं चल रही हैं?

इस समय राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना (एनएआईएस), संसोधित राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना (एमएनएआईएस), मौसम आधारित फसल बीमा योजना (डब्ल्यूबीसीआईएस) एवं नारियल पाम बीमा योजना (सीपीआईएस) चल रही हैं। राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना और संसोधित कृषि बीमा योजना को रबी 2015-16 के बाद बंद कर किसानों को अधिक सुविधा देने के लिए अब खरीफ 2016 से प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (पीएमएफबीवाई) शुरू की जा रही है।

पहले की योजनाओं- एनएआईएस और एमएनएआईएस को रबी 2015-16 के बाद क्यों बंद किया जा रहा है?

इन योजनाओं में कुछ ऐसे प्रावधान थे, जिनसे किसानों को अधिक प्रीमियम देने के बावजूद नुकसान का सही मुआवजा नहीं मिल पा रहा था। बीमित प्रीमियम ज्यादा होने पर तो प्रीमियम पर कैपिंग के कारण बीमा की मूल राशि घटा दी जाती थी, इसके अलावा ज्यादा जोखिम वाले जिलों में ज्यादा प्रीमियम देना पड़ता था, नजदीकी जिलों में प्रीमियम की दर अलग-अलग होती थी एवं किसानों के दावों के भुगतान में काफी देर होती थी। ये योजनाएं किसान के लिए ज्यादा मददगार और फायदेमंद नहीं थीं। इस कारण रबी 2015-16 के बाद इन्हें बंद किया जा रहा है।

नई योजना, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (पीएमएफबीवाई) में किसानों को ज्यादा कितना प्रीमियम देना होगा?

इस योजना में किसानों को पुरानी सभी योजनाओं की तुलना में सबसे कम प्रीमियम राशि देनी होगी। किसानों को प्रीमियम की रकम का बोझ अब महसूस नहीं होगा। इस बोझ की वजह से पहले बहुत से किसान बीमा नहीं कराते थे और उन्हें नुकसान होने पर कोई भरपाई नहीं मिल पाती थी। नई योजना में अब सभी फसलों के लिए खरीफ में ज्यादा से ज्यादा 2 फीसदी और रबी में ज्यादा से ज्यादा 1.5 फीसदी बीमा दर रखी गयी है। इसके अलावा सालाना बागवानी/व्यावसायिक फसल के लिए प्रीमियम की दर ज्यादा से ज्यादा 5 फीसदी की गयी है। ये दरें पहले से काफी कम हैं।

क्या पहले की योजनाओं की तरह इस नई योजना में भी किसानों का कैपिंग की समस्या का सामना करना पड़ेगा?

नहीं, पहले की योजनाओं में अधिक प्रीमियम होने पर बीमित राशि की सीमा तय करने से नुकसान होने पर भरपाई की रकम भी कम हो

जाया करती थी, इसलिए नई योजना में इस प्रावधान को समाप्त कर दिया गया है। अब किसानों को बीमित राशि की पूरी रकम अनुसार पूरा हर्जाना मिल सकेगा।

इस योजना के तहत कौन-कौन से जोखिम कवर किये गये हैं?

इस योजना के तहत निम्नलिखित जोखिम करव किये गये हैं-

1) उपज नुकसान के आधार पर- इस योजना में आग लगने के अलावा बिजली गिरने, तूफान, ओला पड़ने, चक्रवात, अंधड़, बवंडर, बाढ़, जलभराव, जमीन धंसने, सूखा, खराब मौसम, कीट एवं फसल को होने वाली बीमारियां आदि जोखिम से फसल को होने वाले नुकसान को शामिल करके एक ऐसा बीमा कवर दिया जाएगा जिसमें इससे होने वाले सारे नुकसान से सुरक्षा प्रदान की जाएगी।

2) संरक्षित बुआई के आधार पर- अगर बीमित किसान बुआई/रोपाई के लिए खर्च करने के बावजूद खराब मौसम की वजह से बुआई/रोपाई नहीं कर सकते तो वे बीमित राशि के 25 प्रतिशत तक नुकसान का दावा ले सकेंगे।

3) फसल कटाई के बाद रखी फसल को चक्रवात, बेमौसम बारिश और स्थानीय आपदा जैसे ओलों, जमीन धंसने और जलभराव से होने वाले नुकसान का अंदाजा प्रभावी खेत के आधार पर किया जाएगा और इसके अनुसार किसानों के नुकसाना का आंकलन करके दावे तय किये जाएंगे।

इस योजना के तहत कौन-कौन से राज्य भागीदार हैं?

यह योजना सभी राज्य सरकारों और संघ शासित क्षेत्रों के लिए स्वैच्छिक है। अत: इस योजना में सभी राज्य और संघ शासित क्षेत्र शामिल हो सकते हैं।

इस योजना के तहत कौन-कौन से किसान किन-किन फसलों का बीमा करा सकते हैं?

राज्य सरकारों/संघ शासित क्षेत्रों द्वारा तय किये गये इलाके में तय की गयी फसल जो कि अनाज, खाद्यान्न, तिलहन, सालाना व्यावसायिक और बागवानी फसल हो सकती है, उगाने वाले किसान बीमा करवा सकते हैं। नई बीमा योजना तय किये गये क्षेत्र में केसीसी खाता धारक किसानों (जिन्हें ऋणी किसान कहा जाता है) के लिए अनिवार्य है तथा अन्य सभी किसान अगर चाहें तो बीमा का लाभ ले सकते हैं।

इस योजना के तहत किसान बीमा कैसे ले सकता है?

इस योजना के तहत बैंक, केसीसी खाता (जिन्हें ऋणी किसान कहा जाता है) धारक किसानों के लिए जरूरी प्रीमियम, बीमा कंपनियों के पास अपने आप भेज देते हैं और उन किसानों का बीमा हो जाता है। अन्य सभी किसान निकटतम बैंक या तय की गयी बीमा कंपनी के स्थानीय एजेंट को प्रीमियम का भुगतान करके फसल बीमा करा सकते हैं।

क्या नई फसल बीमा योजना में खेतवार नुकसान का आकलन करने का नियम है?

नई बीमा योजना में यह नियम बनाया गया है कि स्थानीय आपदाओं जैसे ओला पड़ने, जमीन धंसने और जलभराव से नुकसान होने पर योजना में खेतवार नुकसान का आकलन किया जाएगा। ठीक उसी तरह फसल कटाई के बाद खेत में पड़ी हुई फसल को 14 दिन के भीतर चक्रवात और बेमौसम बरसात से नुकसान होने पर भी खेतवार आकलन करके भुगतान करने का नियम बनाया गया है।

क्या फसल बीमा में नुकसान के दावों के भुगतान को जल्द से जल्द करने के लिए कोई उपाय किये गये हैं?

नई योजना में स्मार्टफोन से फसल कटाई आकलन की तस्वीरें खींचकर सर्वर पर अपलोड की जाएंगी जिससे फसल कटाई के आंकड़े जल्द से जल्द बीमा कंपनी को मिल सकेंगे। इससे दावों का भुगतान करने में लगने वाले समय को काफी कम किया जाएगा। रिमोट सेंसिंग और ड्रोन जैसी तकनीक के इस्तेमाल से फसल कटाई प्रयोग की संख्या को कम करने में और नुकसान के आकलन में सहायता मिलेगी।

इस योजना के तहत बीमा इकाई क्या है?

यह योजना क्षेत्रीय दृष्टिकोण आधार पर अमल में लायी जाएगी। मुख्य फसलों के बीमा इकाई ग्राम/ग्राम पंचायत स्तर पर होगी और अन्य फसलों के लिए बीमा इकाई राज्य सरकार द्वारा तय की जाएगी और यह ग्राम/ग्राम पंचायत से बड़े आकार की भी हो सकती है।

इस योजना के तहत किसानों के लिए बीमित राशि क्या होगी?

इस योजना के तहत बीमित राशि जिला स्तर तकनीकी समिति (डीएलटीसी) द्वारा उस फसल के लिए तय वित्त पैमाने के बराबर होगी।

बीमा के लिए अपने निकटतम बैंक शाखा, कृषि सहकारिता समिति, बीमा कंपनी या उनके एजेंट से संपर्क करें। अधिक जानकारी के लिए नीचे दी गयी वेबसाइट को देखें:
http:www.agri-insurance.gov.in

प्रधानमंत्री को अनोखा संदेश

छिंदवाड़ा के पारडसिंगा में कुछ युवा किसानों ने जैविक सब्जियों से प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का चित्र बनाकर उनको संदेश दिया है कि 'मेक इन इंडिया' के साथ 'ग्रो इन इंडिया' भी जरूरी है। 'ग्रो इन इंडिया' के विषय में किसान कहते हैं कि आज हम बीज और कीटनाशक के लिए पूरी तरह से विदेशों पर निर्भर हो गये हैं, जो कि धीमा जहर है। भारत से हमारे बीज लुप्त हो जाएंगे तो भविष्य में हमें इसका खामियाजा भुगतना पड़ेगा। उन्होंने कहा कि किसानों को मूलभूत सुविधा नहीं दी जाती है। इस कलाकृति को बनाने में तीन माह का समय लगा है और लगभग 20 किसानों ने मिलकर इसे तैयार किया है।

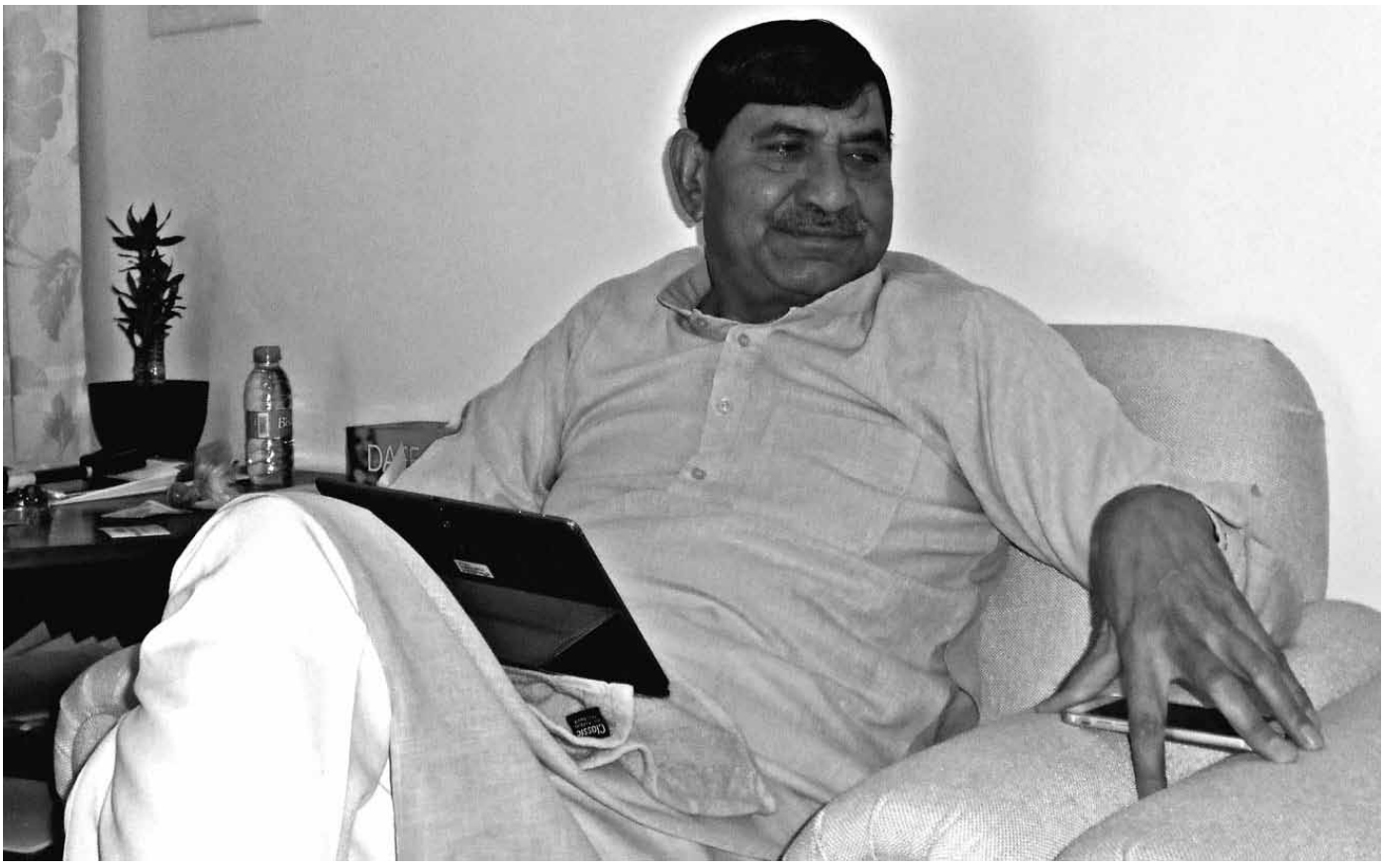

हम गांव-गरीब-किसान के प्रति संवेदनशील और प्रतिबद्ध हैं: मोहनभाई

देशभर में सूखे की मार पड़ी है। दस राज्यों के 300 जिले बुरी तरह चपेट में हैं। सरकार हर संभव कार्य कर रही है। बाकायदा निगरानी के लिए केन्द्रीय गृहमंत्री राजनाथ सिंह की अध्यक्षता में मंत्रियों की एक टीम बना दी गयी है। दुष्प्रभावित राज्यों को फौरी मदद के लिए आवश्यक धनराशि भेज दी गयी है। मराठवाड़ा क्षेत्र में जलदूत नाम से पानी की स्पेशल ट्रेन चलायी गयी है। केन्द्र सरकार सूखे से निपटने के लिए क्या कुछ ठोस प्रयास कर रही है, इन तमाम बिंदुओं पर केन्द्रीय कृषि एवं किसान कल्याण राज्य मंत्री मोहनभाई कुंदरिया से 'कृषि चौपाल' के संपादक महेन्द्र बोरा और ललित पांडे ने विस्तार से बातचीत की। पेश हैं बातचीत के प्रमुख अंश:

देशभर में सूखा पड़ा है लेकिन केन्द्र सरकार हालात से निपट नहीं पा रही है?

ऐसा बिल्कुल नहीं है। हमारी सरकार सूखे पर बेहद चिंतित और गंभीर है। हम हर संभव कोशिश कर रहे हैं। दस राज्यों के 300 जिलों में सूखा पड़ा है। हमारे अधिकारियों की कमेटी ने इन जिलों में जाकर स्थिति का आंकलन किया है। गृहमंत्री राजनाथ सिंह जी के अध्यक्षता में मंत्रियों की एक कमेटी भी बनायी गयी है। सुविधाएं और पैसा सूखाग्रस्त क्षेत्रों में भेजा गया है। हमारे कृषि वैज्ञानिक भी स्थित का आंकलन कर रहे हैं, साथ ही यह अध्ययन भी कर रहे हैं कि कम पानी में कौन सी फसल उगाई जा सकती है और पशुपालन के लिए कम संसाधनों में कौन सी घास उगाई जा सकती है। सूख से निपटने के लिए हम क्या-क्या कर रहे हैं और क्या-क्या करने वाले हैं इसकी रिपोर्ट संसद में भी रखी गयी है।

लेकिन केन्द्र सरकार तब जागी जब सुप्रीम कोर्ट ने सूखे पर सख्ती दिखायी?

सुप्रीम कोर्ट के कहने से पहले से ही हम अपनी जिम्मेदारी निभा रहे हैं। कमेटी के सदस्यों को प्रत्येक क्षेत्र में कई-कई दिन तक दौरा करना पड़ता है उसके बाद ही राहत सामग्री भेजी जाती है। हमारी सरकार ग्राम-गरीब-किसान के प्रति बेहद संवेदनशील और प्रतिबद्ध है। इसलिए बजट में इस तबके का खास ध्यान रखा गया है। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना से किसानों को प्राकृतिक आपदा, ओला, बाढ़ आदि से काफी फायदा होने वाला है। इसी तरह प्रधानमंत्री सिंचाई योजना भी बहुत बड़ी योजना है। हम खेत तक पानी पहुंचाना चाहते हैं। हम आर्गेनिक

खेती को बढ़ावा दे रहे हैं। फर्टिलाइजर का कम इस्तेमाल करना चाहते हैं। ये चीजें फसलों के लिए ही नहीं बल्कि मानव जीवन के लिए भी खतरा हैं। हमने जो सॉइल हेल्थ कार्ड योजना शुरू की थी उससे अब तक मात्र दो साल में 14 करोड़ किसान लाभान्वित हुए हैं। इसमें खेत की मिट्टी की जांच कर किसानों को यह बताया जाता है कि वे कौन सी फसल बोयें और कौन सी खाद का इस्तेमाल करें। किसानों को कम खर्च पर अधिक उत्पादन मिल सके यही इस योजना का उद्देश्य है। पूसा में इस बार विशाल स्तर पर कृषि मेले का आयोजन किया। इसके लिए हमने लगातार तीन महीने तक कड़ी मेहनत की। पूरे देशभर के किसानों ने उसमें भाग लिया। वहां कम से कम से खर्च पर अधिक से अधिक उत्पादन लेने की तकनीक किसानों को बतायी गयी। इससे लाखों किसानों को लाभ मिल रहा है। पिछले महीने 1 से 6 अप्रैल तक देशभर में कृषि गोष्ठियों का आयोजन किया गया।

सूखे से निपटने में केन्द्र सरकार ने ऐसी तत्परता नहीं दिखायी, जबकि पिछले दो सालों से किसान सूखे की मार झेल रहे थे। जब स्थिति बिल्कुल साफ थी तो फिर ऐसा क्यों?

मैंने अभी कहा न कि गांव-गरीब-किसान हमारी प्राथमिकता में हैं। सूखे के मामले में पहले राज्य सरकारों को सूचना देनी होती है, लेकिन राज्यों ने सूचना देर से दी। दस राज्यों ने सूखे की स्थिति बतायी तो वहां मुआवजा भेज दिया गया है। बल्कि हमने तो यह भी कह दिया है कि राज्य सरकारें अपने डिजास्टर फंड से 10 प्रतिशत खर्च कर सकते हैं। किसी को भूखा नहीं सोना चाहिए, ये हमारी जिम्मेदारी है। मैं स्वयं एक गरीब किसान परिवार से हूं और किसानों की व्यथा-वेदना से भलीभांति वाकिफ हूं। भारत सरकार सूखाग्रस्त क्षेत्रों में हरसंभव मदद के लिए चिंतित है और यह जिम्मेदारी भी सरकार की है। लेकिन राज्य सरकारों को भी ईमानदारी के साथ सूखाग्रस्त क्षेत्रों तक मदद पहुंचानी चाहिए।

आप सूखे की जिम्मेदारी राज्यों पर डाल रहे हैं, लेकिन भाजपा शासित राज्यों जैसे गुजरात और हरियाणा ने ही सूखे की जानकारी नहीं दी। इन राज्यों का कहना है कि बारिश कम हुई, सूखा नहीं पड़ा?

गुजरात में सूखे की स्थिति वैसी नहीं है, बारिश कम हुई है। नरेन्द्र मोदी जी जब गुजरात के मुख्यमंत्री थे तो उन्होंने वहां जल संरक्षण में काफी अच्छा काम किया था। उसकी का विस्तार प्रधानमंत्री सिंचाई योजना है। नदी को

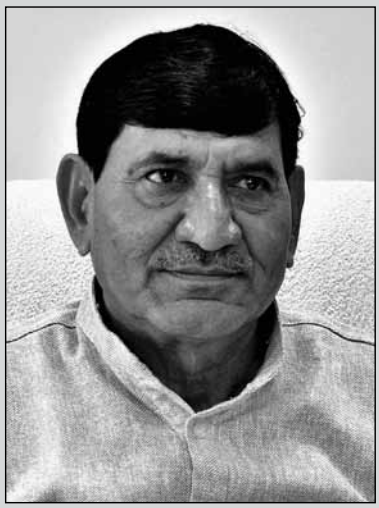

मैं स्वयं एक गरीब किसान परिवार से हूं और किसानों की व्यथा-वेदना से भलीभांति वाकिफ हूं। किसी को भूखा नहीं सोना चाहिए, ये हमारी जिम्मेदारी है।

नदी से जोड़ने की योजना है। गुजरात में सौराष्ट्र इलाका (पश्चिमी क्षेत्र) और कच्छ (उत्तरी गुजरात) में हर साल सूखा पड़ता था, लेकिन नरेन्द्र भाई ने इन इलाकों में हजारों किलोमीटर में तीन मीटर मोटी पाइप बिछाकर लाखों लोगों तक पानी पहुंचाया। नर्मदा के पानी को डायवर्ट करके ऐसा किया गया और यह 17 हजार करोड़ रुपये की योजना थी। वर्तमान में भी हमारी नदी जोड़ो योजना है। इसके अंतर्गत बाढ़ वाले इलाकों का पानी सूखे वाले क्षेत्रों में पहुंचाया जाएगा। ऐसा पूरे देश में किया जाएगा, जिससे बाढ़ और सूखाग्रस्त दोनों क्षेत्रों को लोगों को राहत मिलेगी।

ये तो भविष्य की बातें हुईं। लेकिन सूखे पर केन्द्र सरकार जो आंकड़े दे रही है, उस पर सवाल उठ रहे हैं?

देखिए, राज्यों ने जो आंकड़े दिये और हमारी टीम ने जो अध्ययन किया -आंकड़े वहीं से आएंगे। लेकिन हम आंकड़ों के गणित में क्यों फंसें? हमारा उद्देश्य तो ये है कि कोई भूखा-प्यासा न सोये। पहली बार किसी सरकार ने सूखे पर सबसे ज्यादा पैसा दिया है।

लेकिन सूखे के कारण जो किसान मनरेगा में काम कर रहे हैं, उन्हें पैसे नहीं मिल रहे हैं। क्योंकि केन्द्र सरकार मनरेगा का पैसा नहीं भेज रही है?

मनरेगा का बजट 36 हजार करोड़ रुपये था, जिसे हमने बढ़ाकर 70 हजार करोड़ कर दिया। दूसरी बात मनरेगा का पैसा कभी न तो रोका गया है और न ही आगे रुकेगा। बल्कि सच्चाई तो यह कि मनरेगा में हम इतनी पारदर्शिता ले आये हैं कि पैसा सीधे मजदूरों के एकाउंट में जा रहा है। बीच में कोई गड़बड़झाला नहीं है। पहले मजदूरी का पैसा हाथ से दिया जाता था जिसमें कांग्रेस के लोग गड़बड़ कर जाते थे।

खैर, सूखे से किसान त्रस्त हैं, लेकिन उत्तर प्रदेश में भाजपा और सपा को राजनीति सूझ रही है?

भाजपा कोई राजनीति नहीं कर रही है। बाकायदा हमने बुंदेलखंड में ट्रेन से पानी भिजवाया, लेकिन राज्य सरकार ने उसे रोक दिया। पानी पिलाना हमारा फर्ज है, लेकिन सपा ने अपना कर्तव्य नहीं निभाया। ये तो कुदरत का कहर है, ऐसे में पानी पिलाना मानव धर्म है। अब आप ही बताइए, कौन कर रहा है राजनीति? जब चुनाव आएंगे तो तब की तब देख लेंगे, तब राजनीति भी कर लेंगे। लेकिन यह वक्त राजनीति का कतई नहीं है।

दालों के दाम आसमान छूने लगे हैं। भाजपा जब सत्ता में आती है तो दालों के दाम क्यों बढ़ जाते हैं?

ऐसा भाजपा की वजह से नहीं है, बल्कि दो साल से मानसून ठीक नहीं है जिससे बारिश बहुत कम हो रही है। इस कारण उत्पादन कम हो रहा है, जिससे चीजों के दाम बढ़ रहे हैं। हम तो अपने राज्यों में दो रुपये किलो गेहूं और तीन रुपये किलो चावल दे रहे हैं। हमने दालों का समर्थन मूल्य 250 रुपये बढ़ा दिया है। जमाखोरों के यहां छापे मारे जा रहे हैं। बल्कि अब तो दालों को आवश्यक वस्तु अधिनियम के अंतर्गत ले आये हैं। इससे स्टॉक पर एक लिमिट निर्धारित कर दी गयी है। उससे ज्यादा कोई भी आढ़ती अपने यहां जमाखोरी नहीं कर सकता। अब इस बार बारिश अच्छी होने की उम्मीद है तो फसल भी अच्छी होगी। इससे भविष्य में दालों के दाम नीचे आएंगे।

सत्ता में रहने के बाद आपमें इस कदर सादगी कैसे?

मैं ऐसा ही हूं, चाहे सत्ता में रहूं या सड़क पर। जनता ने अपनी सेवा करने के लिए मुझे यहां तक भेजा है। मैं पांच बार विधायक रहा। दो बार मंत्री रहा। अब दूसरी बार सांसद हूं। पहली बार नौ हजार वोटों से जीता। इस बार 47 हजार वोटों से जीतकर आया हूं। आप इसी बात से अंदाजा लगा सकते हैं। ●

संकर बीजों का बीजगणित

देसी बीजों की यह विशेषता है कि बार-बार उपयोग के बाद भी इनकी उत्पादन क्षमता कम नहीं होती है, मगर आज हमारे सामने अनाज, सब्जियों और अन्य प्रकार के जो संकर बीज हैं उनमें यह क्षमता नहीं है। एक-दो बार उपयोग के बाद इनमें इतनी क्षमता नहीं रहती कि इन्हें बोकर लाभ कमाया जा सके।

■ डॉ. महर उद्दीन खां

भारत में अधिक उत्पादन देने वाले बीजों को कृषिक्षेत्र में क्रांति माना जाता है। ऊपर से देखने में यही आभास होता है कि अधिक उत्पादन देने वाले संकर बीज देकर मल्टीनेशनल कंपनियों ने हम पर बहुत बड़ा उपकार किया है, मगर यह बात इतनी सरल नहीं है। जब बीजों के इस गणित पर विचार करते हैं तो पता चलता है कि हमने नये संकर बीज अपनाकर इन मल्टीनेशनल कंपनियों पर बड़ा उपकार किया है जिसके लिए इन कंपनियों को भारत का सदैव आभारी होना चाहिए। दरअसल इन बीजों का गणित केवल अधिक उत्पादन तक ही सीमित नहीं है बल्कि बीजों के अनवरत उत्पादन का भी गणित है।

देसी बीजों की यह विशेषता है कि बार-बार उपयोग के बाद भी इनकी उत्पादन क्षमता कम नहीं होती है, मगर आज हमारे सामने अनाज, सब्जियों और अन्य प्रकार के जो संकर बीज हैं उनमें यह क्षमता नहीं है। एक-दो बार उपयोग के बाद इनमें इतनी क्षमता नहीं रहती कि इन्हें बोकर लाभ कमाया जा सके। हर दो साल बाद किसान को नये बीज की आवश्यकता होती है। इस प्रकार बीज उत्पादक कंपनियों का धंधा अबाध गति से चलता रहता है।

इन संकर बीजों की एक कमजोरी यह है कि केवल गोबर या कूड़े-करकट की खाद से इनसे उत्पादन नहीं लिया जा सकता। इनसे भरपूर उत्पादन लेने के लिए रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग अनिवार्य होता है। गन्ना, गेहूं, चावल और अन्य फसलों के प्रचलित नये बीजों से अधिक उत्पादन लेने के लिए डीएपी और यूरिया का प्रयोग अनिवार्य है। इस प्रकार इन उर्वरकों से बचाव के लिए किसान के पास कोई विकल्प नहीं बचा है। डीएपी जैसे महंगे उर्वरक के उत्पादन पर भी इन्हीं मल्टीनेशनल कंपनियों का एकाधिकार है। इस प्रकार बीज के साथ-साथ इन कंपयिों का उर्वरक उत्पादन का धंधा भी अनवरत जारी रहता है।

देसी बीजों में रोगों तथा खर-पतवार का मुकाबला करने की क्षमता होती थी, मगर नये बीजों में यह क्षमता नहीं है। इनसे उत्पादन लेने के लिए कीटनाशक एवं खर-पतवार नाशक दवाइयों का उपयोग करना भी मजबूरी बन गया है। जो किसान अबसे चार-पांच दशक पहले जहरीली दवाइयों के प्रयोग को अपराध मानता था वह आज धड़ल्ले से इनका प्रयोग कर रहा है, क्योंकि बिना इसके काम चलने वाला नहीं है। इस प्रकार एक बीज के साथ-साथ उर्वरक, खर-पतवार नाशक और कीटनाशकों की खेप भी साथ में आ गयी।

नये बीजों के बीजगणित की इस श्रृंखला का समापन यहीं नहीं हो जाता। इससे आगे भी और कई धंधों का विकास इन नये बीजों ने किया है। देसी बीज भारतीय जलवायु के अनुकूल होते थे, इसलिए मौसम के अनुसार इनके सेवन से रोगों की संभावना कम रहती थी। नये बीजों के आगमन से पहले गेहूं मुख्य भोजन में शामिल नहीं था। लोग मौसम के अनुसार मोटे अनाज का प्रयोग करते थे मगर अब ऐसा नहीं है। गेहूं हमारा मुख्य भोजन बन गया है। मिस्सी रोटी घरों से गायब हो गई है और आज की पीढ़ी को बेझड़ के बारे में पता ही नहीं है। जिसका नतीजा है कि आज हर आदमी कब्ज, गैस, एसिडिटी और मोटापा आदि किसी न किसी रोग का शिकार है। नये बीजों के आगमन से पहले ये रोग आम नहीं थे। लोक मान्यता है कि मोटा अनाज खाने वाले लोग मोटे नहीं होते। इन रोगों से बचाव के लिए अनेक दवाइयां भी आ गई हैं। इन दवाइयों का उत्पादन भी मल्टीनेशनल कंपनियां ही करती हैं। इस प्रकार एक बीज ने दवा उद्योग को भी खूब लाभ पहुंचाया है।

नये बीजों ने जहां एक ओर मल्टीनेशनल कंपनियों के लिए समृद्धि के द्वार खोले हैं वहीं भारत के सामने कई प्रकार की समस्याएं पैदा कर दी हैं। ये ऐसी समस्याएं हैं जिनका हल न तो भारत के पास है और न ही इन मल्टीनेशनल कंपनियों के पास। देसी बीजों के लिए पानी की आवश्यकता कम होती थी जबकि नए बीजों के लिए पानी की आवश्यकता अधिक होती है। गेहूं का कोई भी नया बीज चार-पांच सिंचाई से कम पर समुचित उत्पादन नहीं दे सकता, जिसका नतीजा यह है कि भूजल का स्तर लगातार नीचे जा रहा है। कई इलाकों में तो नलकूप तीन-चार साल बाद ही बेकार हो जाते हैं। भूजल का लगातार गिरता स्तर किसान और सरकार दोनों के लिए चिंता का विषय है, मगर अभी तक इसका कोई ठोस समाधान सामने नहीं आया है।

एक समाधान किसान को बताया जा रहा है कि वह परंपरागत सिंचाई के स्थान पर टपका सिंचाई का प्रयोग करे, मगर इसका यंत्र इतना मंहगा है जो हर किसान के लिए संभव नहीं है। इससे एक बात यह भी पता चलती है कि पानी की समस्या के समाधान के लिए कुछ और नये उद्योगों को जन्म दिया जा रहा है उन पर भी मल्टीनेशनल कंपनियों का ही कब्जा होना है। इस सबके साथ इन कंपनियों ने एक और पेटेंट उद्योग पर भी अपना एकाधिकार-सा ही कर लिया है।

नये बीजों द्वारा उत्पन्न समस्याओं का अंत भूजल के गिरते स्तर पर ही नहीं होता। रासायनिक उर्वरकों के अंधाधुंध उपयोग के कारण भूमि की उर्वरा-शक्ति निरंतर कमजोर होती जा रही है। अब तो कृषि वैज्ञानिक भी यह आशंका व्यक्त करने लगे हैं कि अगर रासायनिक उर्वरकों का उपयोग कम नहीं किया गया तो भूमि को बांझ होने में अधिक समय नहीं लगेगा। अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि संकर बीजों से वर्तमान तथा भविष्य में आने वाले संकट पर गंभीरता से विचार किया जाए तथा ऐसे उपाय खोजे जाएं जिनसे इस संकट से छुटकारा मिल सके। यदि समय रहते ऐसे उपाय नहीं खोजे गये तो भारत मल्टीनेशनल कंपनियों के ऐसे कुचक्र में फंस जाएगा, जिससे पार पाना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य हो जाएगा।

नये बीजों ने जहां एक ओर मल्टीनेशनल कंपनियों के लिए समृद्धि के द्वार खोले हैं वहीं भारत के सामने कई प्रकार की समस्याएं पैदा कर दी हैं। ये ऐसी समस्याएं हैं जिनका हल न तो भारत के पास है और न ही इन मल्टीनेशनल कंपनियों के पास है।

maheruddin.khan@gmail.com

अजोला उत्पादन एवं धान की खेती में उसका योगदान

धान उत्पादन में सहयोगी एवं जैव उर्वरक के रूप में चीन, फिलीपींस, अमेरिका, यूरोप और एशिया में प्राचीन काल से इसका प्रयोग किया जा रहा है। इसके उपयोग से उत्पादन में वृद्धि होती है। साथ ही यह पर्यावरण मित्र भी है।

■ डॉ. गंगाशरण सैनी

अजोला प्रकृति अनुपम एवं बहुपयोगी उपहार है। इसे मोस्क्यूटो फर्न, डकवीड फर्न, फैरी मोस, वाटर फर्न आदि नामों से जाना जाता है। यह विश्व के विभिन्न भागों में पाया जाता है। अजोला एक जलीय फर्न है जो कि साल्वीनेसी वर्ग का पौधा है, जिसका उपयोग विभिन्न प्रकार से किया जाता है। धान उत्पादन में सहयोगी एवं जैव उर्वरक के रूप में चीन, फिलीपींस, अमेरिका, यूरोप और एशिया में प्राचीन काल से इसका प्रयोग किया जा रहा है। इसके उपयोग से उत्पादन में वृद्धि होती है। साथ ही यह पर्यावरण मित्र भी है। इसका उत्पादन तीव्र गति से होता है। यह

बायोमास को मात्र 3 से 10 दिनों में दोगुना कर देता है और ताजे जैविक पदार्थ को 8-10 टन प्रति हेक्टेयर धान के खेत में उत्पन्न कर देता है। इस लेख में अजोला के वैज्ञानिक उत्पादन और उसका धान उत्पादन में वृद्धि का उल्लेख किया जा रहा है, ताकि इसे स्वयं उगाकर किसान भाई लाभान्वित हो सकें-

- सर्वप्रथम अजोला उत्पादन हेतु जगह का चयन करना होता है। इसके लिए छायादार स्थान उपयुक्त माना जाता है। यदि ऐसा स्थान उपलब्ध न हो तो क्यारियों पर छाया का प्रबंध करना अनिवार्य होता है।
- फावड़े की सहायता से 10 मीटर लंबी, 2 मीटर चौड़ी और 15 सेमी गहरी नाली बनायें। नीचे से क्यारी को समतल कर लें।
- नालियों में पॉलीथीन की चादर बिछायें। किनारों के चारों ओर पक्की ईंटें रखें ताकि पॉलीथीन यथास्थान रहे।
- नालियों में खेत की छनी हुई मिट्टी की हल्की परत बिछा दें।
- गोबर का घोल बनाकर मिट्टी पर छिड़क दें और लकड़ी की सहायता से उसे फैला दें।
- इसके बाद नालियों को पानी से भर दें।
- फिर हाथ से नालियों में अजोला का छिड़काव करें ताकि अजोला पानी पर तैरने लगे और उसकी जड़े पानी के संपर्क में आ जाएं। जड़ें पानी के संपर्क में आने पर पोषक तत्वों को सुगमता से ग्रहण कर लेती हैं और अजोला के पौधे तेजी से बढ़ने लगते हैं।
- क्यारी को पॉलीथीन की चादर से ढंक दें।

इस प्रकार 3-10 दिन में अजोला की फसल तैयार हो जाती है, जिसे 2-3 दिन के अंतर पर निकाल पर उपयोग में लाना चाहिए।

धान की फसल में अजोला के फायदे

- जैविक खेती में सहायक होता है।
- सह फसल के रूप में उगाया जा सकता है।
- हरी खाद के रूप में उपयोग किया जाता है।
- मिट्टी की उर्वरका को बढ़ाता है।
- धान के उत्पादन में वृद्धि करता है।
- खरपतवारों का नियंत्रण करता है।
- 50 प्रतिशत तक उर्वरकों की पूर्ति करता है।
- धान उत्पादन की लागत में कमी लाता है।

धान हमारे देश की एक प्रमुख खाद्यान्न फसल है जिसने देश को खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। जारी खरीफ के मौसम में हमारे किसान भाइयों ने धान की रोपाई उन क्षेत्रों में प्रारंभ कर दी होगी जहां सिंचाई की सुविधाएं हैं और मानसून के आने के बाद अन्य क्षेत्रों में रोपाई की जाएगी। इसलिए यहां धान के प्रमुख रोग और उन पर नियंत्रण की जानकारी दी जा रही है।

धान के रोग एवं उनसे बचाव

■ **दिनेश जोशी**

धान की उन्नत बौनी किस्मों को उच्च निवेश-स्तर के साथ उगाने से जहां अधिक उत्पादन प्राप्त हुआ, वहीं कीट-व्याधियों को भी अनुकूल वातावरण मिला, इस कारण वर्तमान में धान-उत्पादकों को इन समस्याओं से जूझना पड़ रहा है। इन रोगों के कारण जितनी अधिक उपज में गिरावट होती है, उतना ही इनके नियंत्रण की ओर ध्यान देना आवश्यक हो गया है।

नाइट्रोजन की अधिक मात्रा उपयोग करने से धान पर जीवाणुज पत्ती अंगमारी, तनागलन, बदरा एवं आभारी कांगियारी आदि रोगों का प्रकोप बढ़ता है। उत्तरी-पश्चिमी भारत में पाया गया कि 15 जुलाई से पहले की रोपाई में बदरा एवं बंट का प्रकोप कम होता है, जबकि देर से रोपाई करने पर आभासी कांगियारी का संक्रमण घटता है। यही नहीं किस्मों में भी रोग-रोधिता स्तर में भिन्नता है। हरियाणा कृषि विश्विद्यालय के कौल केन्द्र पर विभिन्न बासमती किस्मों में बदरा का प्रकोप 5.7 से 51.4 प्रतिशत अनुमानित किया गया। चंद आदि (1987) ने धान की किस्मों में बहु-रोग-रोधिता के महत्व की ओर ध्यान आकर्षित कराया, क्योंकि रोग-रोधी किस्मों की उपलब्धता से रासायनिक नियंत्रण की आवश्यकता ही न होगी और साथ ही वातावरण दूषित होने से बचेगा। जैव- नियंत्रण हेतु सुडोमोनास के चार अगल-अलग नमूने हैदराबाद, मारूटेरू तथा चिपलिमा पर परखे गये, परन्तु पर्णच्छद अंगमारी के नियंत्रण में इनसे सफलता प्राप्त नहीं हुई।

पिछले दो-तीन दशकों में पौध-संरक्षण पर विशेष जोर दिया गया है। ऐसा अनुभव किया गया, कि केवल कवकनाशियों का प्रयोग ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि वातावरण प्रदूषण से बचने हेतु ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न करना, जिससे पौधों पर इन कवक, जीवाणु एवं वायरस का संक्रमण न हो अथवा कम हो, यह भी जरूरी है।

रोगों का विस्तार तापमान एवं अन्य जलवायु संबंधी कारकों पर निर्भर करता है, साथ ही सस्य-क्रियाओं का भी प्रभाव पड़ता है। धान के मुख्य रोगों को उनके अभिकर्ता के आधार पर तीन भागों में बांटा जाता है।

कवकीय (Fungal) रोग

- बदरा (Blast)
- तनागलन (Stem rot)
- तलगलन एवं बकाने (Foot rot & bakanae)
- पर्णच्छद गलन (Sheath rot)
- पर्णच्छद अंगमारी (Sheath blight)
- भूरी-चित्ती (Brown spot)
- आभासी कांगियारी (False smut)
- उदबत्ता (Udbatta)

जीवाणुज (Bacterial) रोग

- जीवाणुज पत्ती अंगमारी (Bacterial leaf blight)
- जीवाणुज पत्ती रेखा (Bacterial leaf streak)

वायरस (Virus) रोग

- टुंग्रो (Tungro) धान का वायरस रोग है।

घासीय-वृद्धि रोग (Grassy stunt)

इन रोगों के लक्षण पौधों की पत्तियों, पर्णच्छद, पुष्पगुच्छ तथा दानों पर पाए जाते हैं। कुछ को पत्तियों पर पाई जाने वाली विक्षति (Lesion) से पहचाना जा सकता है। प्रायः जीवाणु ग्रसित छोटे पौधे झुलसकर मरते है अथवा पत्तियों के किनारों पर विक्षति होती है, जबकि वायरस ग्रसित पौधे की अवरुद्ध बढ़वार तथा दौजियों की अधिकता एवं पत्तियों के रंग में बदलाव होता है। कृषि विज्ञानियों ने धान के रोगों को पौधो के विभन्न भागों पर संक्रमणता के आधार पर वर्गीकृत किया, जिससे फसल की उन विशेष अवस्थाओं पर ध्यान रखने से रोग प्रबंधन अधिक प्रभावशाली हो सकेगा। वर्गीकरण निम्न प्रकार है:

पौध की अवस्थाः बदरा, भूरे धब्बे तलगलन एवं बकाने और जीवाणुज पत्ती अंगमारी।

पर्णच्छद एवं तने परः बदरा, तनागलन, पर्णच्छद अंगमारी, तलगलन और पर्णच्छद गलन।

पत्तियां: बदरा, भूरा धब्बे (भूरी चित्ती), संकीर्ण पत्ती चित्ती, जीवाणुज पत्ती अंगमारी, जीवाणुज पत्ती रेखा और टुंग्रों।

दाने पर: बदरा, भूरे धब्बे, बंट (Bunt), आभासी कांगियारी और उदबत्ता।

रोग विशेष के आधार पर विभिन्न क्षेत्र

बदरा: कश्मीर घाटी, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, उत्तर प्रदेश एवं प. बंगाल का पहाड़ी क्षेत्र, असम और मेघालय, बिहार के रांची, पलामू एवं छोटा नागपुर कोरापुर (उड़ीसा), आंध्र प्रदेश की आराकू घाटी, कोर्ग (कर्नाटक), रत्नागिरी (महाराष्ट्र), मध्य प्रदेश के बस्तर और सरगुजा के भाग एवं व्यानन्द और कुट्टानंद (केरल) क्षेत्रों में धान की फसल पर इसका ज्यादा प्रकोप देखा गया है।

भूरी चित्ती: उत्तर प्रदेश का तराई क्षेत्र, मध्य प्रदेश, प. बंगाल, असम, एवं तमिलनाडु के कुछ भाग, कर्नाटक एवं केरल के तटीय क्षेत्रों में इस रोग का अधिक प्रकोप देखा गया है।

तनागलन: पंजाब, हरियाणा एवं तमिलनाडु में यह रोग ज्यादा प्रभावी है।

उदबत्ता: उड़ीसा का पहाड़ी क्षेत्र कोरापुर, महाराष्ट्र का कोंकण और आंध्र प्रदेश एवं कर्नाटक के धान उत्पादक इलाकों में यह रोग ज्यादा प्रभाव दिखाता है।

रोग नियत्रंण के उपाय

धान के रोग नियत्रंण से पूर्व रोग की प्रकृति, जीवन चक्र, संक्रमण की अवस्था तथा परपोषी पौधों की जानकारी जरूरी है। इस ओर वैज्ञानिक लगातार प्रयत्नशील हैं, साथ ही सस्ते एवं पर्यावरण हितैषी रसायनों की खोज जारी है। आधुनिक विचारधारा के अनुसार फसल का पर्यावरण ऐसा हो जिसमें कवक, जीवाणु एवं वायरस हानि न पहुंचा सके। इसमें रोग रोधी किस्मों का विकास, परोक्ष में रोग विकास एवं वृद्धि के प्रतिकूल सस्यक्रियाएं अपनाना और सीधे रसायन (कवकनाशी) का रोग पर प्रहार सम्मलित हैं। रोग नियंत्रण में देरी से धान की पैदावार को काफी नुकसान होता है। अत: रोग नियंत्रण का सबसे अच्छा उपाय है कि रोग पैदा होने की संभावनाओं को ही न्यूनतम किया जाये।

रोग नियंत्रण की चार विधियां अपवर्जन (Exclusion), उन्मूलन (Eradication), संरक्षण (Protection), प्रतिरक्षीकरण (Immuniation) मुख्य रूप से प्रचलन में हैं।

अपवर्जन : बिना रोक-टोक के खाद्यान्नों एवं खाद्य पदार्थों का अंतर्राष्ट्रीय एवं अंतर्राज्यीय स्तर पर आवागमन से काफी रोगों के प्रसारण में वृद्धि हुई है। इस प्रकार रोगग्रस्त क्षेत्रों से पौधे और वस्तुओं के आने को रोका जा सकता है, जिससे इनके विस्तार क्षेत्र में वृद्धि न हो। सभी देशों में संगरोध व्यवस्था (Quantine Arrangements) की गई है, इसका पालन सबके हित में है। समय-समय पर इसके लिए विशेष कानून भी बनाए जाते रहें हैं। हमारे देश में 1914 में संगरोध व्यवस्था लागू की गई तथा बाद में इसमें संशोधन होते रहे। विश्व में लगभग 150 देश इसका पालन करते हैं। रोग विस्तार के सभी माध्यमों जैसे भूमि, पानी एवं हवा के माध्यम से रोगकारी जीवाणु एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में प्रवेश न कर सकें, ऐसा प्रयास किया जाता है।

उन्मूलन: कुछ परिस्थितियों में रोग ग्रसित पौधों का उन्मूलन ही आर्थिक दृष्टि से रोग नियंत्रण का लाभप्रद एवं आसान विधि होती है। इस विधि में ग्रसित क्षेत्र के पौधों या परपोषी फसल को ही नष्ट कर देना आर्थात काटकर जला देना अथवा मिट्टी में दबा देना होता है। अत: ऐसे पौधों (परपोषी) को काट कर नष्ट करने से भी इनका जीवन चक्र टूट जाएगा, जिससे नए संक्रमण को रोका जा सकता है। बदरा रोग सामान्यत: धान से पहले सावंक पर रहता है। अत: इन खरपतवारों को नष्ट करने से मूल निवेश द्रव्य की मात्रा में कमी होगी और धान की फसल में होने वाले बदरा रोग के प्रकोप की संभावनएं भी उसी अनुपात में कम होगी। इस प्रकार का प्रबंधन ही उन्मूलन कहलाता है।

फसल-चक्र अपनाने से भी इन रोगजनक जीवधारियों का जीवन चक्र टूटता है तथा रोग की सघनता में काफी कमी होती है, क्योंकि प्रत्येक रोग की अपनी विशेष पारिस्थितिकीय जरूरत होती है। इस प्रकार मृदा उत्पन्न रोग जीवधारियों पर आसानी से नियंत्रण पाया जा सकता है। खेत की सफाई एवं पहली फसल अवशेषों को नष्ट करना भी इसी ओर पहला कदम है। तनागलन ग्रसित फसल के अवशेषों को जलाना इसी विधि में आता है, इससे रोग संक्रमण घटेगा।

बीजों को बिजाई से पूर्व पारायुक्त कवकनाशी (Organo Mercurial Fungicide) से उपचारित करने पर बीज जनित रोगों से फसल को मुक्त किया जा सकता है। एमीसान से बीजों का उपचार करने पर बकाने रोग के लक्षण प्रकट होने की संभावनाएं समाप्त हो जाती है अर्थात बीज द्वारा संक्रमण नहीं हो पाता तथा फसल रोग-मुक्त रहती है।

संरक्षण: इस प्रकार के प्रबंध का उद्देश्य फसल को ऐसा वातावरण प्रदान करना है, जिससे रोगजनक पौधों पर संक्रमण न कर सकें। इसके लिए रसायनों का प्रयोग और पर्यावरणीय-चालक जैसी व्यवस्था की जाती है जैसे हवारोधकों आदि का उपयोग। कवकनाशी का प्रयोग भी दोनों के बीच ऐसा वातावरण पैदा करता है। अत: समय-समय पर विभन्न कवकनाशियों के छिड़काव और बुरकाव की आवश्यकता होती है, जिससे फसल को सुरक्षा प्राप्त होती रहती है। कवकनाशी वे रसायन है, जो कवक एवं जीवाणु द्वारा उत्पन्न रोगों के नियंत्रण हेतु प्रयोग किए जाते है। कुछ ही रसायन ऐसे हैं जो वायरस संक्रमण से पौधों को संरक्षण देने में समर्थ हैं।

रासायनिक पौध संरक्षक (कवकनाशी इत्यादि) भी सतह (Contact) एवं व्यवस्थित (Systematic) दोनों ही प्रकार से कार्य करते हैं। सतह संरक्षण में कवकनाशियों से बीज, पत्तियां एवं फल आदि को रोग से मुक्ति मिलती है, जबकि व्यवस्थित कवकनाशी परपोषी पौधे की शारीरिक क्रियाओं में प्रविष्ट होकर रोगजनकों (कवक एवं जीवाणु) के संक्रमण से पौधों की रक्षा करते है। इन कवकनाशियों को उनके रासायनिक गुणों के आधार पर भी जाना जाता है। मुख्यत: ये गंधक, तांबा, पारा, जैविक (Organic) तथा प्रति-जैविक (Antibiotic) आदि के ग्रुप में बांटे जा सकते हैं।

प्रतिरक्षीकरण (रोधन): पौधों में इस प्रकार की आंतरिक प्रतिरक्षा शक्ति उत्पन्न करना जिससे रोगजनक उन पर संक्रमण न कर सके, रोग नियंत्रण की प्रतिरक्षी विधि कहलाती है। वातावरण में रोग बीजाणु होने पर भी फसल के पौधों को प्रभावित न कर सके अर्थात पौधों में रोग-रोधिता की शक्ति उत्पन्न करना ही इस सिद्धांत का मूलमंत्र है। रोग रोधी किस्मों का विकास, ऐसा ही एक प्रयास है। जैसे एच.के. आर.-120 किस्म पर जीवाणुज पत्ती अंगमारी का संक्रमण नहीं होता, जबकि पी.आर.-106 इस रोग से ग्रसित हो जाती है। ऐसी ही किस्म विक्रमार्या, जो टुग्रों वायरस से प्रभावित नही होती। आई.आर.-50, पी.टी.बी.-18 एवं साकेत-4 किस्मों में एक अंक माप के साथ टुंग्रो वायरस के लिए रोग प्रतिरोधिकता पायी गयी। इस प्रकार मुख्य बीमारियों के प्रति बहुत सी प्रतिरोधी किस्मों का विकास कर लिया गया है। रोग निरोधकता, रोग उत्पन्न होने से पूर्व कवकनाशियों के द्वारा बीजोपचार, पौध उपचार आदि से भी प्राप्त की जा सकती है। रासायनिक उपचार संरक्षण विधि में भी कवकनाशियों का प्रयोग करते हैं, जिनका अनुभव के आधार पर रोग की संभावनाओं के समय पर कवकनाशी द्वारा पौधों का रोगों से बचाव करते हैं, परन्तु प्रतिरक्षक विधि में रोग आक्रमण से पूर्व किया गया उपचार ही शामिल है। ●

कम पानी में धान की खेती

मशहूर किसान कवि घाघ ने कहा था- 'धान, पान और केला - ये तीनों पानी के चेला।' इसका मतलब यह है कि धान, पान और केला बिना पानी के नहीं हो सकते। लेकिन अब धरती पानी की किल्लत से जूझ रही है। ऐसे में धान उगाना है तो कुछ नया सोचना होगा।

■ ताज रावत

धान की फसल प्राय: ऐसे क्षेत्रों में उगायी जाती हैं जहां प्रचुर सिंचाई के साधन उपलब्ध हैं। एक किलो धान के उत्पादन के लिये 3000 लीटर पानी खर्च होता है। यही कारण है कि अनेक बार पर्यावरण संरक्षण ावादी धान उगाने का विरोध भी करते आये हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान पूसा (दिल्ली) के वैज्ञानिकों ने अधिक पानी की खपत से पैदा होने वाली धान की किस्मों की बजाय कुछ ऐसी किस्में सुझायी हैं जो कि कम पानी की खपत से पैदा की जा सकती हैं।

संस्थान के वैज्ञानिकों का कहना है कि समय पर पर्याप्त बरसात न भी हो तो किसानों को तनावग्रस्त होने की आवश्यकता नहीं है। किसान यदि सतर्कता से काम लें तो वह सूखे की स्थिति से निपट सकते हैं। दरअसल धान की कई ऐसी किस्में हैं जो न सिर्फ कम समय में पैदावार देती हैं, अपितु इनको सिंचाई की भी काफी कम आवश्यकता होती है। कृषि वैज्ञानिकों का सुझाव है कि यदि सूखे जैसे हालात पैदा होते हों तो इन किस्मों का उपयोग किया जा सकता है। यदि जुलाई माह में भी पर्याप्त बारिश नहीं होती है तो भी धान की कई ऐसी किस्में हैं जिनकी पौध जुलाई में तैयार कर अगस्त में रोपाई की जा सकती है। इस प्रकार जुलाई आखिर में भी यदि बरसात होती है तो उसका लाभ किसानों को मिल सकता है। धान की इन किस्मों में पूसा सुगंध-5, पूसा बासमती-1121, पूसा-1612, पूसा बासमती-1509, पूसा-1610 आदि शामिल हैं। धान की यह प्रजातियां लगभग चार माह में पैदावार दे देती हैं।

वैज्ञानिकों ने स्पष्ट किया कि किसान विकल्पत: एक और प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल भी कर सकते हैं। इस प्रौद्योगिकी के अनुसार धान की बुवाई गेहूं की भांति खेतों में की जा सकती है। पौध तैयार करने की आवश्यकता नहीं है। कम बरसात वाले क्षेत्रों में सरसों की पैदावार लेना भी एक अच्छा विकल्प साबित हो सकता है। इसकी फसल को अगस्त और सितंबर के दौरान लगाकर कम बारिश तथा सिंचाई की सुविधाओं के आभाव के बावजूद अच्छी पैदावार की जा सकती है। वर्तमान में अनुसंधानों के बाद कृषि वैज्ञानिकों ने सरसों की कई ऐसी किस्में ईजाद की हैं जिसमें प्रति हेक्टेअर डेढ़ टन तक की उपज पाई जा सकती है।

भारत में खेतीबाड़ी को आज भी मानसून का जुआ माना जाता है। वैज्ञानिकों ने पानी को एकत्रित करने के भी अनेक प्रभावी उपाय सुझाये हैं। उनकी राय है कि जिन किसानों के खेत अभी खाली हैं वे खेत को लेजर तकनीक के प्रयोग से समतल कर सकते हैं। इस तकनीक के इस्तेमाल से परंपरागत सिंचाई की अपेक्षा दो-तिहाई पानी की ही खपत होती है। साथ ही पानी की खपत को कम करने के लिये खरपतवार नियंत्रण पर भी ध्यान देना चाहिये।

जहां सिंचाई सुविधाओं का अभाव है और बरसात भी कम होती हो वहां ड्रिप सिंचाई, फव्वारा सिंचाई, पॉली हाउस तथा नेट हाउस जैसी आधुनिक सिंचाई तकनीकों का इस्तेमाल किया जा सकता है। इन आधुनिक तकनीकों का प्रयोग कर कम सिंचाई के बावजूद अच्छी फसलें तैयार की जा सकती हैं। इन तकनीकों के इस्तेमाल के लिये सरकारें भी अनुदान देकर प्रोत्साहित करती हैं।

पंजाब व हरियाणा के नक्शेकदम पर तराई

चावल का कटोरा कहे जाने वाले तराई में यदि यों ही धान की फसलें लहलहाती रहीं तो वह दिन दूर नहीं जब धरती का गला ही सूख जाएगा। तराई में धान की खेती के लिए भूजल दोहन जिस तेजी से हो रहा है उसे देखते हुए धरती के नीचे पानी का स्तर तेजी से नीचे भाग रहा है। पंजाब और हरियाणा में इस तरह धान की खेती पर सालों पहले प्रतिबंध लगा दिया गया है, लेकिन उत्तराखंड सरकार ने इससे कोई सीख नहीं ली जबकि पूरा उत्तराखंड गर्मियों में पानी को तरस जाता है। केन्द्रीय भूजल बोर्ड की रिपोर्ट के मुताबिक तराई के 40 फीसद पाताल तोड़ कुएं वाले क्षेत्रों में पानी सूख गया है। कभी इन पाताल तोड़ कुओं से बिना पंप किये ही पानी ऊपर बहने लगता था। सालभर में धान की कई-कई फसलों की खेती वजह से यहां मिट्टी और पानी का संतुलन बिगड़ गया है। ऊधमसिंहनगर, जसपुर और काशीपुर में पिछले एक दशक में पानी का स्तर दो से चार मीटर तक नीचे चला गया है।

गोविंद बल्लभ पंत कृषि विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. मंगला राय के मुताबिक समूचा तराई पंजाब और हरियाणा के नक्शेकदम पर चल रहा है। गर्मी में धान की फसल के लिए पानी का अंधाधुंध दोहन इस पूरे क्षेत्र को एक दिन बेपानी कर देगा। राज्य सरकार को चाहिए कि पानी के इस तरह के दोहन पर प्रतिबंध लगाये।

वहीं पहाड़ में पानी की सुविधा के लिए पिछले वर्षों में सड़क के किनारों पर बड़ी-भारी मशीनों से गहराई तक खुदाई करके हैंडपंप लगाये गये, लेकिन उनमें से अनेक गर्मियों में पानी नहीं देते। कई तो सूख ही चुके हैं। इनके लगने से आसपास के गांव के नौले-धारों का पानी भी घट गया है या सूख गया है। हैंडपंप को जल संरक्षण के उपाय की तरह प्रचारित किया जाता रहा है जबकि मामला इसके ठीक उलट है। जल पुरुष राजेंद्र सिंह का कहना ठीक ही है कि ये पानी के संरक्षण की नहीं, जमा पानी को खर्च करने का उपाय है।

उत्तराखंड के तराई क्षेत्र में भी भूजल निरंतर नीचे जा रहा है और इसका समाधान लोग पहले से ज्यादा गहराई में खुदाई करके पानी खींच कर निकाल रहे हैं। लेकिन कब तक और कितना गहरा? आखिर एक दिन वहां से सिर्फ हवा निकलेगी पानी नहीं। ●

टमाटर की भरपूर खेती

■ खुशाल सिंह

उत्तरी भारत के मैदानों में टमाटर की फसल एक साल में दो बार ली जा सकती है। पहली फसल के लिए बीज क्यारियों में जुलाई-अगस्त में बोया जाती है। पौध रोपाई का कार्य अगस्त के अंत तक किया जा सकता है। दूसरी फसल नवम्बर-दिसम्बर के महीने में बोई जा सकती है, जिसकी पौध रोपाई का कार्य जब पाले का खतरा टल जाए तो फरवरी में किया जाना चाहिए। टमाटर गर्मी के मौसम की फसल है और पाला नहीं सह सकती। 12 डिग्री से.ग्रे. से 26 डिग्री से.ग्रे. के तापमान के बीच इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। रात का आदर्श तापमान 20 से 25 डिग्री से.ग्रे. होना चाहिए। टमाटर की फसल पोषक तत्वों से युक्त दोमट मिट्टी में सबसे अच्छी होती है, लेकिन इसकी अगेती किस्मों के लिए बलुई तथा दोमट मिट्टी अधिक उपयुक्त है। इसके अलावा यदि जल निकास की व्यवस्था अच्छी हो तो इसे मटियार तथा तलहटी दोमट में भी उगाया जा सकता है।

टमाटर की किस्में

विभिन्न प्रान्तों में स्थान विशेष के अनुरूप विभिन्न किस्मों को उगाने की सिफारिश की गई है।

पूसा रूबी: यह अगेती किस्म है, जिसके फल रोपाई के 60-65 दिनों बाद पक जाते हैं। फल हल्की धारियों वाले चपटे और समान रूप से लाल होते हैं। यह भारी पैदावार देने वाली किस्म है।

पूसा-120: सूत्रकृमि से होने वाली बीमारियों को सह सकने वाली यह किस्म अधिक पैदावार देने वाली है। इसके फल मझौले आकार के आकर्षक और समान रूप से लाल होते हैं।

पूसा शीतल: इस किस्म में मध्यम आकार के चपटे, गोल फल होते हैं। अगेती बसंत ऋतु की फसल के लिए उपयुक्त है। 8 डिग्री सें.ग्रे. तक तापमान पर इसके फल लग सकते हैं।

पूसा गौरव: इसके फल अंडाकार, चिकने, परत मोटी और लाल होते हैं। यह लम्बी दूरी तक ले जाने की दृष्टि से उपयुक्त है। अधिक उपज देने वाली किस्म खरीफ और बसंत दोनों मौसमों के लिए उपयुक्त है।

पूसा सदाबहार: इसके मध्यम आकार के अंडाकार गोल फल होते हैं। यह उत्तरी भारत के मैदानों में जुलाई-सितम्बर के अलावा पूरे साल उगाने के लिए उपयुक्त है। 6 डिग्री से.ग्रे. से 30 डिग्री से.ग्रे. तक रात के तापमान पर भी इसके फल लग सकते हैं।

पूसा उपहार: इसके मध्यम आकार के गोल फल होते हैं। फल गुच्छे में लगते हैं। यह भारी पैदावार देने वाली तथा अधिक बढ़वार वाली किस्म है।

पूसा संकर-1: यह अधिक फलदायक किस्म है। फल मध्यम आकार के चिकने, आकर्षक व गोल होते हैं। यह संकर किस्म जून-जुलाई के अधिक तापमान में भी फल दे सकती है।

पूसा संकर-2: यह भी अधिक उपज देने वाली संकर किस्म है। फल गोल, चिकने तथा चमकदार होते हैं। यह सूत्रकृमि प्रतिरोधी तथा मोटी परत वाली समान रूप से पकने वाली किस्म है।

पूसा संकर-4: यह अधिक उपज देने वाली संकर किस्म है। यह किस्म दूर तक ले जाने के लिए उत्तम है। इसके फल गोल आकार के चिकने एवं आकर्षक होते हैं।

बीज की मात्रा और बुआई

एक हेक्टेयर क्षेत्र में फसल उगाने के लिए नर्सरी तैयार करने हेतु लगभग 350 से 400 ग्राम बीज पर्याप्त होता है।

बुआई का तरीका

बीज उठी हुई 65 सें.मी. चौड़ी क्यारियों में उगाया जाता है। खरीफ के मौसम में क्यारियों की चौड़ाई कम करके 60 सें.मी. की जा सकती है। जब पौध 15 सें.मी. ऊंची हो जाए तो वह रोपे जाने के लिए उपयुक्त हो जाती है। संकर किस्मों में बीज की मात्रा 200 ग्राम प्रति हेक्टयेर पर्याप्त रहती है।

बुआई का समय

उत्तरी भारत के मैदानों में टमाटर की फसल एक साल में दो बार ली जा सकती है। पहली फसल के लिए बीज क्यारियों में जुलाई-अगस्त में बोया जाता है। पौध रोपाई का कार्य अगस्त के अंत तक किया जा सकता है, दूसरी फसल नवम्बर-दिसम्बर के महीने में बोई जा सकती है, जिसकी पौध रोपाई का कार्य जब पाले का खतरा टल जाए तो मार्च में किया जाना चाहिए।

रोपाई: 60 सें.मी. चौड़ी मेड़ों पर हमेशा शाम के समय करनी चाहिए और इसके बाद सिंचाई भी कर देनी चाहिए। पंक्ति और पौध से पौध की दूरी 60 सें.मी. रखी जाती है।

उर्वरकों का प्रयोग

खेत तैयार करते समय 25 से 30 मीट्रिक टन अच्छी सड़ी गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से डालें। इसके अलावा 400 कि.ग्रा. सुपर फॉस्फेट तथा 60 से 100 कि.ग्रा. पोटेशियम सल्फेट डाला जाना चाहिए। 300-400 कि.ग्रा. अमोनियम सल्फेट या सी.ए.एन. को दो बराबर मात्रा में फसल में डालें। पहली रोपाई के एक पखवाड़े बाद और दूसरी उसके 20 दिन बाद।

सिंचाई: पहली सिंचाई रोपाई के तुरन्त बाद करनी चाहिए। बसंत के मौसम में छठे या सातवें दिन सिंचाई करनी चाहिए।

उपज: यदि टमाटर को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना हो तो इन्हें तब तोड़ना चाहिए जब वे कच्चे हों तथा पीले रंग के और टिक सकने की अवस्था में हों। किस्म के अनुसार टमाटर की फसल 75 से 100 दिनों में तैयार हो जाती है। ●

आम के तनाभेदक कीट का प्रबंधन

■ शालिनी श्रीवास्तव

आम का तना भेदक (बैटोसेरा रूफोमैकुलेटा, सिरैमबाइसीडी-कोलियाप्टेरा) पूरे देश में आम के बागों में खतरे के रुप में निरन्तर बढ़ता जा रहा है। यह कीट उत्तर प्रदेश के आम उत्पादक क्षेत्र के वृक्षों में व्यापक रूप से व्याप्त है। इस कीट का प्रकोप मलीहाबाद क्षेत्र में भी व्यापक रूप में पाया गया है। बागों के रख-रखाव के अनुसार इसका प्रकोप एक से आठ प्रतिशत तक देखा गया है। प्रभावित वृक्षों में धीरे-धीरे पत्तियां पीली पड़ने लगती हैं तथा कीटों से प्रभावित शाखाएं सूखने लगती हैं। गंभीर प्रकोप होने पर वृक्ष मर सकता है।

लक्षण

वयस्क कीट 4 से 6 सें.मी. लंबा होता है। मई से दिसंबर के मध्य, आम के पुराने वृक्षों के मुख्य तने में यह अंडे देता है (जून-जुलाई के मध्य इसकी संख्या अधिकतम होती है)। वयस्क कीट का नवजात (सूंडी), छाल के नीचे के हिस्से को खाते हुए सुरंग बनाता है तथा बाद में मुख्य तनों में प्रवेश कर जाता है। यह कीट, वृक्ष की लकड़ी को खाता है जिससे उसकी क्षति होती है। प्रवेश स्थल से बाहर निकलता हुआ बुरादा, आम के वृक्ष में तना भेदक कीट की उपस्थिति को दर्शाता है। क्षति से पत्तियां पीली पड़ जाती हैं जिसके पश्चात शाखाएं सूखने लगती हैं। यदि कीट का प्रबंधन नहीं किया गया तो पूरा वृक्ष सूख जाता है।

जीवन चक्र

कीट का जीवन चक्र एक वर्ष का होता है तथा प्रत्येक वर्ष एक वंश का उद्भव होता है। वयस्क कीट (बीटल) सख्त, 50-55 मि.मी. गहरे भूरे (नर कीट) तथा मादा कीट 55-60 मि.मी. लंबाई के पीले हरे रंग के रोयेंदार होते हैं। मानसून (वर्षा) की शुरुआत के साथ कीट रतिक्रिया आरंभ करते हैं तथा मादा कीट 1 से 2 दिनों में अंडा देने लगते हैं। ये कीट 20-25 दिनों तक निरंतर अंडे देते रहते हैं। औसतन ये एक अंडा प्रतिदिन देते हैं। इन अंडों से 7 से 13 दिनों में कीट निकलते हैं। कीट के अंडे चमकीले सफेद, अंडाकार, 5-7 मि.मी. लंबे होते हैं। पूर्ण विकसित कीट (ग्रब) 85-95 मि. मी. लंबा, सख्त, खंडीय शरीर वाला, हल्के पीले रंग का होता है। इसका (प्यूपा) 50-55 मि.मी. लम्बा, पीले भूरे से गहरे भूरे रंग का होता है। कायांतरण, सुरंग में, 20-25 दिनों तक होता है। इनकी जीवन अवधि 170-190 दिनों की होती है तथा वयस्क 60-100 दिनों तक जीवित रहते हैं। कीट के प्रकोप का लक्षण नवंबर से दिसंबर में सर्वाधिक होता है।

प्रबंधन

- बागों को साफ-सुथरा रखना चाहिये तथा संस्तुत कृषि तकनीकं का उपयोग करना चाहिये।
- लोहे के तार/हुक से प्रभावित छिद्रों से कीटों को यांत्रिक रूप से हटाना चाहिये।
- प्रभावित तनों की छंटाई कर उन्हें नष्ट कर दें। कटे भाग पर 5 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (50 ग्राम प्रति लीटर पानी में) का लेप लगाना चाहिये।
- छिद्रों को साफ कर तथा डाइक्लोरवॉस (76 ईसी) के 0.5 प्रतिशत घोल से रूई के फाहे को भिगोकर छिद्र में डाल कर सभी छिद्रों को मिट्टी के लेप से बन्द कर दें, जिससे रसायन की गैस सभी स्थान पर पहुंच सके।
- मानसून आने पर तने पर क्लोरपाइरीफॉस के 0.04 प्रतिशत (20 ईसी) (2 मि.ली. प्रति लीटर पानी के घोल में) का दो छिड़काव 15 दिनों के अन्तराल पर करना चाहिये। ●

करी पत्ते के औषधीय उपयोग

करी पत्ते का उपयोग रसदार व्यजंनों में किया जाता है। आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति में करी पत्ते का उपयोग जड़ी-बूटियों के रूप में किया जाता है। इसके प्रमुख औषधीय गुण एंटीडायबेटिक, एंटीऑक्सीडेंट, एंटी इंफ्लेमेंटरी, हैप्टोप्रोटेक्टिव, एंटीहाइपरकोलेस्ट्रोलेमिक हैं। करी पत्ता निम्न रोगों के उपचार में सहायक है-

- मधुमेह को नियंत्रित करने के लिए प्रतिदिन सुबह खाली पेट करी पत्ते के 10 ताजे पत्ते तीन महीने तक चबाकर खायें।
- बाल झड़ रहे हों या बाल अचानक सफेद हो रहे हों तो प्रतिदिन करी पत्ते के ताजे पत्ते खायें। ताजे पत्ते न मिलने पर पत्तों का चूर्ण भी उपयोग में लाया जा सकता है।
- प्रतिदिन करी पत्ते के पत्ते चबाने से मोटापा कम होता है।
- दस्त व पेचिश में कोमल करी पत्तों को शहद में मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है।
- बवासीर के रोगी को कोमल करी पत्तों को शहद के साथ खिलाने से राहत मिलती है।
- वमन एवं अपच में कोमल करी पत्तों को नींबू के रस और चीनी के साथ मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है।
- कोमल करी पत्तों को नियमित सेवन करने से नेत्र ज्योति बढ़ती है।
- पेट की गड़बड़ी में कोमल करी पत्तों को पीसकर छाछ में मिलाकर खाली पेट सेवन करने से लाभ होता है।
- करी पत्ते की जड़ में औषधीय गुण पाये जाते हैं। इनका नियमित उपयोग करने से गुर्दा रोगों से छुटकारा मिलता है।

-जी. एस. सैनी

ओल चौधरी के हुनर का कमाल

■ **मानवेन्द्र**

बिहार के हाजीपुर, जद्दुआ बरई टोला निवासी शंकर किशोर चौधरी ओल (जिमीकंद या सूरन) से विभिन्न प्रकार के व्यंजन बनाकर खासे लोकप्रिय हो चुके हैं। लोगों ने अब उनका नाम ही ओल चौधरी रख दिया है। वर्ष 1994 में छह महीने का फूड क्राफ्ट कोर्स करने के बाद शंकर किशोर ने महज एक एकड़ जमीन लीज पर लेकर ओल की खेती की शुरुआत की। ओल के औषधीय गुणों से प्रभावित होकर उन्होंने 1997 में ओल का हलवा, लिट्टी और मुरब्बा बनाकर उसे बाजार में उतारा। उनके इस प्रयोग को अच्छी कामयाबी मिली। इस सफलता से उत्साहित होकर उन्होंने ओल की सब्जी, चोखा, चटनी, अचार, नमकीन सेवई, चिप्स, पापड़, बड़ी, दनौड़ी, पावरोटी, रोटी, पूरी, भुजिया, रायता, कोफ्ता, पराठा, कचरी, समोसा, छोला, चाट, मिश्रित अचार, खिचड़ी, मोदक, सॉस, चूर्ण, दहीबाड़ा, सलाद, पकौड़ी, गुटखा आदि व्यंजनों को लोगों तक पहुंचाया। विशेष स्वाद की वजह से लोग उनके कद्रदान होते चले गये।

वर्ष 2000 में शंकर किशोर ने पहली बार ओल की बनी मिठाइयों की प्रदर्शनी सोनपुर मेले में लगायी। इसमें ओल से तैयार मीठे व्यंजनों में खासकर हलवा, बरफी, चॉकलेट, मुरब्बा, बिस्कुट, कालाजाम, खीर, पुआ, बुंदिया, चाय, रबड़ी, आइसक्रीम, लड्डू, जलेबी, जैम, केचप, च्यवनप्राश, रसगुल्ला, जूस, गुलगुल्ला आदि को प्रदर्शित किया गया। इसके बाद उन्होंने केरल, कोच्चि, बस्तर, तिरुअनंतपुरम, प्रगति मैदान-नई दिल्ली, वाराणसी आदि जगहों में अपने हुनर का कमाल दिखाया। वे अब तक ओल से 56 प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन बना चुके हैं और उनका यह शोध बदस्तूर जारी है।

ओल की खेती, उत्पादन और उपयोग के क्षेत्र में विशेष योगदान के लिए शंकर किशोर चौधरी को वर्ष 2010 में कृषि विभाग (भारत सरकार) द्वारा 'उद्यान रत्न अवार्ड' और वर्ष 2011 में 'कांस्य पदक' से नवाजा गया। वर्ष 2013 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने उन्हें सम्मानित किया। उनके जीवन पर दूरदर्शन ने 'ओल तेरा जवाब नहीं' नाम से एक डॉक्यूमेंट्री फिल्म भी बनायी है।

शंकर किशोर चौधरी का कहना है कि जबकि आज खेती-किसानी घाटे का सौदा बनकर रह गयी है, ऐसे में ओल की खेती में काफी संभावना है। यह एक व्यावसायिक फसल है, लेकिन किसानों को इसके लिए प्रशिक्षण की जरूरत है। सबसे अच्छी बात यह है कि इसकी खेती बेहद कम पूंजी में होती है, इसलिए इसमें लाभ की संभावना अधिक होती है।

वे बताते हैं कि 1978 में आंध्र प्रदेश से ओल के मात्र पांच कंद बिहार आये थे। जबकि आज बिहार से दो हजार ट्रक कंद बाहर के राज्यों में जाते हैं, जिनमें गोवा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, दिल्ली, प. बंगाल, आंध्र प्रदेश और असम प्रमुख हैं। बिहार के दस जिलों में इसका उत्पादन हो रहा है। ओल के साथ लता कस्तूरी, कद्दू, करेला, पपीता, परवल, नवंबर-दिसंबर में राजमा-मटर की खेती की जा सकती है। केला की खेती तो बड़े आराम से होती है।

किशोर चौधरी का कहना है कि ओल औषधीय गुणों की खान है। इसमें तीक्ष्णता, वातहर, उद्दीपक, पाचक, रुचिकर, पौष्टिक, कृमिनाशक, कफनाशक जैसे गुणधर्म हैं। पेट संबंधी विकारों, दमा, फेफड़े की सूजन, फाइलेरिया, पेचिश, रक्त विकार, वमन और बवासीर जैसी बीमारियों के लिए ओल और इसके सभी उत्पाद फायदेमंद हैं।

-अधिक जानकारी के लिए
शंकर किशोर चौधरी से इस
नंबर पर संपर्क करें- 9473223634

आवश्यक सूचना

'कृषि चौपाल' पत्रिका को देश के हर जिले में लेखकों एवं विज्ञापन प्रतिनिधियों की आवश्यकता है। कृपया नीचे दिये गये मोबाइल नंबर एवं ईमेल पर संपर्क करें:-

+91-9910406059
krishichaupal@gmail.com

पिताजी का 'काण घा' और रामदेव का एलोवेरा

कितनी आसानी से सामुदायिक उपकार की भावना व्यापार का सफल ब्रांड बन जाती है।

■ **बटरोही**

मेरे पिताजी ज्यादा पढ़े-लिखे नहीं थे, सिर्फ अक्षर ज्ञान था उन्हें। वह न वैद्य थे, न डॉक्टर, न समाजसेवी थे, न क्रांतिकारी। उनकी चिंता का क्षेत्र सिर्फ उनका परिवार था। हालांकि यह कहना शायद गलत होगा कि उनके परिवार में सिर्फ उनकी संतानें यानी हम लोग ही आते थे। पूरा इलाका नहीं तो हमारा गांव तो तब उनके परिवार की सीमा में आता ही था, जिसमें सभी वर्णों के लोग शामिल थे। बचपन के दिनों में गांव के ही नहीं, कुछ खास रोगों के इलाज के लिए इलाके के लोग दूर-दूर से उनके पास आते थे। बड़े होने पर हमें पता चला कि कुछ खास बीमारियों की ऐसी दवाएं उन्हें मालूम थीं जो उनके अलावा बहुत कम लोगों को मालूम थीं।

कभी-कभी जब हम लोग सोये रहते, सूरज उगने के साथ ही पिताजी नहा-धोकर पास के जंगल में निकल जाते थे और अपने साथ अनेक तरह की घास और पेड़-पौधों की जड़ें लेकर घर लौटते थे। कभी-कभी जब वह किसी काम में व्यस्त होते, हमें जंगल भेजते और खास तरह की घास-पत्तियों या जड़ों को तोड़कर लाने को कहते। वह उन खास जगहों के बारे में बताते जहां पर वे चीजें उपलब्ध होतीं, और हमें निर्देश दिए जाते कि पौंधे या पत्तियों की जड़, तने या छाल को हमें कितनी मात्रा में और कैसे पौंधे से अलग करना है, कितना हिस्सा जमीन या पौधे पर ही छोड़ देना है। ये बातें वह बहुत विस्तार से हमें बताते और एक-एक कदम पर सावधानी बरतने के लिए कहते। खास बात यह होती कि वह उनके कुमाऊनी नाम तो हमें बताते, लेकिन उनका क्या उपयोग किया जाना है, इसकी जानकारी हमें नहीं देते। सारी जिंदगी वे वनस्पतियां हमारे मन में रहस्य ही बनी रहीं। हालांकि बाद में हमने उनमें से कुछ वनस्पतियों के औषधीय रहस्य के बारे में पता तो कर लिया था, मगर हमारे हाथ में आते ही उनका वह असर मानो खत्म हो जाता था जो उनके द्वारा किये जाने वाले इस्तेमाल के वक्त होता था।

प्रकृति के खजाने के पीछे छिपे रहस्यों के बारे में हमें एक दिन पिताजी ने ही बताया। कह नहीं सकता कि ये उनकी मनगढ़ंत बातें थीं या वास्तविकता, मगर वह अपनी टूटी-फूटी भाषा में पूरे विश्वास के साथ हमें बताते कि भगवान ने प्रकृति को जो दैवी-शक्तियां प्रदान की हैं, उनका असर हमेशा एक जैसा नहीं पड़ता। दैवी-शक्ति-रूपी इस दवा का असर इस बात पर निर्भर करता है कि उसे कौन, किस नीयत से और कब प्रयोग में ला रहा है। किसी गलत आदमी के हाथ में आ जाने पर उसका असर उल्टा भी पड़ सकता है। उनके अनुसार, दवा का प्रयोग अगर अपने निजी स्वार्थ या पैसा कमाने के लिए किया जायेगा तो उसका असर फौरन खत्म हो जायेगा। इसीलिए हमारे समाज में यह विश्वास मौजूद था कि औषधियों के रहस्य को दूसरों को बताने से पहले अनेक सावधानियां बरतनी जरूरी हैं।

अगर किसी को इस शक्ति का रहस्य बताया जा रहा है तो यह पता लगाया जाना जरूरी है कि वह पूरी तरह भरोसेमंद है और वह उसका दुरुपयोग नहीं करेगा, चाहे वह उसकी संतान ही क्यों न हो। उस औषधीय ज्ञान का उत्तराधिकारी चुनने में बहुत सावधानी बरतनी जरूरी थी। यही वजह थी कि कई ऐसे जानकार लोग अमूल्य जानकारियों को अपने अंदर ही लिए इस दुनिया से कूच कर गए क्योंकि उन्हें अपने परिवार में कोई सुयोग्य पात्र नहीं मिला। कुछ ऐसे किस्से भी सुनने में आये कि एक जानकार व्यक्ति को अपने परिवार में तो नहीं, रास्ते में एक अपरिचित सहयात्री ऐसा मिला, जिसके साथ बातें करते हुए उन्हें अपने उत्तराधिकारी की छवि दिखाई दी और जिसके कारण उनका ज्ञान सुरक्षित रह पाया।

ऐसी ही एक औषधि का उल्लेख पिताजी बहुधा हमसे किया करते जिसका पहाड़ी नाम वह लेते 'काण घा' यानी 'कांटों वाली घास'। उनकी नजर में यह अनेक रोगों में काम आने वाली अचूक औषधि है। इसमें मौजूद घी का वह खास तौर पर उल्लेख करते और बताते कि गाय-भैंसों का घी तो इसके सामने कुछ भी नहीं है। यह वनस्पति हमारे इलाके में खूब पैदा होती थी इसलिए इसकी अलग-अलग प्रजातियों के अनेक उपयोग थे। इसका बड़ा आकार 'रामबांस' कहलाता था, जिसके तने को उखल में कूट कर उसका साबुन की तरह इस्तेमाल किया जाता था। हालांकि इस काम के लिए रीठे का भी इस्तेमाल किया जाता था, मगर रीठे की अनुपलब्धता में रामबांस ही प्रयोग में लाया जाता।

पिताजी का यही 'काण घा' रामदेव का

पतंजलि का कारोबारी लक्ष्य 10,000 करोड़ रुपये

जब पूरी दुनिया आर्थिक सुस्ती के दौर से गुजर रही है, पतंजलि आयुर्वेद ने चालू वित्त वर्ष के दौरान अपना कारोबार दोगुना से भी ज्यादा बढ़ाकर 10,000 करोड़ रुपये के पार पहुंचाने का लक्ष्य रखा है। कंपनी ने इसी वर्ष छह प्रसंस्करण इकाइयों पर 1,150 करोड़ रुपये निवेश की भी योजना बनाई है। पतंजलि आयुर्वेद के प्रवर्तक योग गुरु बाबा रामदेव का कहना है कि देश के विभिन्न हिस्सों में पांच-छह प्रसंस्करण इकाइयां लगायी जाएंगी जिसमें 1,000 करोड़ रुपये का निवेश किया जाएगा। शोध एवं विकास पर 150 करोड़ रुपये खर्च किए जाएंगे। ये इकाइयां असम, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, हरियाणा और उत्तर प्रदेश में लगाई जाएंगी। उन्होंने कहा कि पतंजलि इस साल तीव्र प्रतिस्पर्धा वाले डेयरी उत्पादों के क्षेत्र में भी उतरेगी।

पतंजलि आयुर्वेद के प्रबंध निदेशक आचार्य बालकृष्ण ने कहा कि इकाइयां सूखा प्रभावित इलाकों महाराष्ट्र के विदर्भ, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के बुंदेलखंड क्षेत्र में लगायी जाएंगी। इनमें से कम से कम चार इकाइयां इसी वित्त वर्ष के अंत तक चालू हो जाएंगी। पतंजलि आयुर्वेद लिमिटेड के 2015-16 के कामकाज का ब्यौरा देते हुए उन्होंने कहा कि 31 मार्च, 2016 को समाप्त वित्त वर्ष के दौरान कंपनी ने 150 प्रतिशत वृद्धि हासिल करते हुए 5,000 करोड़ रुपये से अधिक का कारोबार किया। गौरतलब है कि वर्ष 2011-12 पतंजलि का कारोबार मात्र 446 करोड़ था।

पतंजलि की व्यापारिक सफलता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि दंत कांति टूथपेस्ट का कारोबार 425 करोड़ हो गया है। केश कांति तेल का टर्नओवर 350 करोड़ के पार पहुंच गया है। देसी घी का एक नया बाजार खड़ा हो गया है और इसका कारोबार 1308 करोड़ हो चुका है। पतंजलि के पास मौजूदा समय में 40000 डिस्ट्रीब्यूटर, 10000 स्टोर और 100 मेगा स्टोर व रिटेल स्टोर हैं।

एलोवेरा है, यह रहस्य मुझे तब मालूम हुआ जब इस वनस्पति ने रामदेव का विशाल साम्राज्य खड़ा कर दिया। इनके अलावा रामदेव के सहयोगी आचार्य बालकृष्ण उन अनेक वनस्पतियों के बारे में भी बताते हैं, जिन्हें पिताजी चुपके-से सुबह-सुबह हमारे पड़ोस के जंगल से लाते थे और सुयोग्य पात्र न मिल पाने के कारण जिनकी विस्तृत जानकारी उन्होंने हमें भी नहीं दी थी।

इसलिए नहीं कि मुझे रामदेव से ईर्ष्या होने लगी है, इसलिए भी नहीं कि मैं अपनी उस धरती की उपज का लाभ भी नहीं ले सका, जिसका मैं कानूनी तौर पर स्वामी था। मेरे क्षोभ का कारण यह है कि मुझमें ऐसा कौन-सा दोष था, जिसके चलते पिताजी ने मुझसे उस ज्ञान को साझा करने की जरूरत नहीं महसूस की जब कि जिसे हरियाणा और नेपाल से आये साधुनुमा व्यापारियों ने उन नियमों को ताक में रखकर हमसे हड़प लिया।

मैं यह भी नहीं कहता कि रामदेव ने गलत किया, रामदेव न करते, कोई और जो उनसे भी बड़ा व्यापारी होता, उनका उपयोग करता। आज के इस युग में इसे किसी भी रूप में गलत नहीं कहा जा सकता। आखिर हमारे ही क्षेत्र की कई जड़ी-बूटियों को, किल्मोड़ा, घिंगारू आदि को किस तरह सिरे से गायब कर दिया गया है, यह बात आज किसी से छिपी नहीं है।

मेरी नाराजगी तो अपने पिताजी से है जिन्होंने हमारे लिए तो इतने कठोर नियम बना दिए, जिससे कि उन वनस्पतियों का निर्मम दोहन न हो सके, वे हमारी पवित्र विरासत की तरह हमारे इर्द-गिर्द हमेशा मौजूद रहें, लेकिन क्या उनके मन में थोड़ी देर के लिए भी यह बात नहीं आई होगी कि आने वाले वक्त में हमारा सारा समाज क्या उन्हीं की तरह का भोला समाज होगा। क्या थोड़ी देर के लिए भी उनके मन में यह विचार नहीं आया होगा कि अगर किसी दिन देवभूमि की इन दैवी ताकतों का व्यापार होने लगेगा, और यह व्यापार एक विशाल आर्थिक साम्राज्य खड़ा कर चुका होगा तो उनकी उन भोली आस्थाओं का क्या होगा, जिनके सहारे उन्होंने अपने और अपनी संततियों के समूचे जीवन को अभावों और हताशा का कभी खत्म न होने वाला उत्तराधिकार सौंपा था? क्या उस दिन सचमुच उन वनस्पतियों की दैवी-शक्ति खत्म हो जाएगी? अगर ऐसा है तो 'पतंजलि' नामक ब्रांड इतनी सफलता से कैसे फल-फूल रहा है?

-लेखक प्रख्यात साहित्यकार हैं और कुमाऊं विश्वविद्यालय नैनीताल में हिंदी के विभागाध्यक्ष रह चुके हैं।

'कृषि चौपाल' पत्रिका डाक से मंगाने के लिए सदस्यता फॉर्म

● **एक वर्ष (12 अंक) : रु. 200** ● **दो वर्ष (24 अंक) : रु. 380** ● **पांच वर्ष (60 अंक) : रु. 950**

सदस्य का नाम .....

डाक का पता .....

..... राज्य ..... पिन कोड .....

फोन/मोबाइल ..... ई-मेल .....

चेक/डिमांड ड्राफ्ट संख्या ..... रुपये ..... बैंक व ब्रांच का नाम .....

दिनांक ..... हस्ताक्षर .....

-: कृपया ध्यान दें :-

पत्रिका भारतीय डाक विभाग की पोस्टल सेवा से भेजी जाएगी। चेक या डिमांड ड्राफ्ट '**KRISHI CHAUPAL**' के नाम देय होगा। उसके पीछे अपना नाम, पता एवं फोन नंबर लिखकर नीचे दिये गये पते पर भेजें:-

कृषि चौपाल, सी-355, तृतीय तल, गली नं.-9, वेस्ट विनोद नगर, दिल्ली-110092, फोन: +91-991040-6059

चित्र साभार: अनूप साह

जनता ही बचा सकती है जंगल

दुर्भाग्य है कि जो जनता सदियों से जंगलों को पालती-पोसती रही और जंगलों को बचाना जिसकी परंपरा रही, जब कभी पेड़ों पर कुल्हाड़ियां और आरियां चलीं तो वह उन पर चिपक गयी, वही जनता आज जंगलों को जलाने की दोषी ठहराई जा रही है।

■ **दाताराम चमोली**

उत्तराखंड में हर साल फायर सीजन में जंगल जलते हैं, लेकिन इस बार तो फरवरी माह से ही आग लगनी शुरू हो गयी। दावानल ने ऐसा प्रकोप दिखाया कि राज्य में सेना तैनात करनी पड़ी। मई माह के पहले हफ्ते तक आग की 17 सौ से अधिक घटनाओं में करीब चार हजार हेक्टेयर वन क्षेत्र और लाखों रुपए की वन संपदा जलकर राख हो गयी। नौ लोगों की जानें भी चली गयीं। जंगली जीवों के लिए जान का संकट खड़ा हो गया। इन हालात में कई राजनेता और बुद्धिजीवी राज्य की जनता को आग बुझाने की नसीहत भी देने लगे। कुछ लोगों द्वारा यह भी कहा जाने लगा कि पहाड़ के लोग अच्छी घास के लिए जंगलों को आग लगाते हैं, यानी आग लगाने के वही दोषी हैं।

दुर्भाग्य है कि जो जनता सदियों से जंगलों को पालती-पोसती रही और जंगलों को बचाना जिसकी परंपरा रही, जब कभी पेड़ों पर कुल्हाड़े और आरियां चली तो वह उन पर चिपक गयी, वही जनता आज जंगलों को जलाने की दोषी ठहराई जा रही है। यह सच है कि स्थानीय लोग घास-चारे के लिए सिविल वन क्षेत्र में खरपतवार को नष्ट करने के लिए आग अवश्य लगाते हैं, लेकिन इसका जो परंपरागत अनुभव उनके पास है वह अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिलता। लाइन काटकर वे इस तरह खरतवार को जलाते हैं और साथ-साथ आग को बुझाते हैं कि वह फैल ही नहीं पाती। इस बात की गहराई में कोई नहीं जाना चाहता है कि आखिर आग यूं क्यों भड़की? जांच होनी जरूरी है कि जंगलों के जलने का सबसे अधिक फायदा किसको है? कहीं प्रचंड आग की वजह वृक्षारोपण की धांधलियों को छिपाना तो नहीं है? कहीं इसके पीछे उस टिंबर माफिया का हाथ तो नहीं जो आग लगने के बाद जंगलों की लकड़ी को कौड़ियों के भाव हड़पने को पहुंच जाता है?

जो लोग जंगलों और उत्तराखंड की जनता के आपसी रिश्तों से अनभिज्ञ हैं, जिन्हें जंगलों को बचाने के यहां के गौरवशाली इतिहास और संस्कृति का पता नहीं उनसे कोई शिकायत नहीं, लेकिन आश्चर्यजनक है कि वे राजनेता जिनके शासन में जंगल धू-धू कर जले अचानक अब जनता और जंगलों के हमदर्द हो गये हैं। उनकी ज्ञानेंद्रियां इस कदर जागृत हुईं कि जनता को जंगलों को बचाने की नसीहत दे रहे हैं। जंगलों को आग से बचाने के उपाय भी सुझा रहे हैं।

समझ में नहीं आता कि उनके दिमाग की परतें तब ही क्यों खुलती हैं जब वे कुर्सी पर नहीं होते हैं? अगर राज्य की किसी भी सरकार ने पिछले 15-16 वर्षों में जंगलों को आग से बचाने के ठोस उपाय किए होते तो साल दर साल हजारों हेक्टेयर जंगल और करोड़ों-अरबों की वन संपदा यूं ही खाक नहीं होती। वर्ष 1993, 2005 और 2009 में भी वनाग्नि ने इतना प्रचण्ड रूप दिखाया था कि बड़ी संख्या में पशुओं और लोगों को जानें गंवानी पड़ीं। ज्यादा पहले न भी जाएं तो वर्ष 2012 में करीब 2830 हेक्टेयर, 2013 में 384 हेक्टेयर, 2014 में 930 हेक्टेयर, 2015 में 701 हेक्टेयर और 2016 में अब तक 3900 हेक्टेयर वन क्षेत्र दानावन की चपेट में आया। इससे करोड़ों रुपए की वन संपदा नष्ट हुई।

जनता को आग बुझाने की सीख देने वाले यह भी तो सोचें कि आखिर उत्तराखंड के लोग जान जोखिम में डालकर क्यों आग बुझाएं। वर्ष 2009 में पौड़ी गढ़वाल के गंगवाणा गांव के छह लोग आग बुझाते शहीद हुए तो उनके परिवारों की सरकार ने कितनी सुध ली? जिन जंगलों को जनता ने पाला-पोसा, वन अधिनियम 1980 लागू कर उन्हें जनता से दूर क्यों कर दिया गया? इको सेंसटिव जोन के नाम पर भी लोगों के अधिकार छीने गये और विकास बाधित किया गया। क्या वनों को बचाने और पालने-पोसने की जनता को यही सजा मिलनी चाहिए। इसके बावजूद जनता इसलिए जंगलों की रक्षा करती रही कि राज्य गठन के बाद वन आधारित उद्योग लगेंगे और पलायन रुकेगा, लेकिन अब वह महसूस कर रही है कि प्रदेश में सत्ता का अर्थ सिर्फ प्राकृतिक संसाधनों की लूट रहा गया है। जंगल जनता के नहीं, बल्कि पेपर मिल मालिकों, जंगलात के ठेकेदारों या जड़ी-बूटी तस्करों के ही होकर रह गये हैं। ऐसे में जंगलों को बचाने की परंपरा का निर्वाह किया भी जाए तो किसके लिए? क्या इन जंगलों से युवाओं को रोजगार मिलने का सपना पूरा हो पाया है? क्या राज्य की अब तक की कोई भी सरकार दावा कर सकती है कि उसने वनों के व्यावसायिक उपयोग की ऐसी ठोस नीतियां बनायीं जो आग को काबू में रख सकें और युवाओं को रोजगार भी दे सकें?

हैरानी की बात है कि प्रति वर्ष जंगलों को आग से बचाने के जागरूकता अभियानों पर ही लाखों फूंक दिए जाते हैं, लेकिन इसमें स्थानीय लोगों की सहभागिता की सोच वातानुकूलित कमरों से निकलकर धरातल तक नहीं पहुंच पाती है। जिला स्तर पर जिन इंतजामों का ढोल पीटा जाता रहा वे कहां हैं, क्यों नहीं कारगर साबित हो पा रहे हैं? आज भी वनकर्मी पहाड़ के लोगों की तरह झाड़ू से ही आग बुझाने को विवश हैं तो हर साल लाखों रुपए के जो उपकरण खरीदे गये वे कहां हैं? चीड़ यदि आग के फैलने की बड़ी वजह है तो फायर सीजन से पहले इसकी पत्तियों को एकत्रित कर व्यावसायिक उपयोग में क्यों नहीं लाया जाता है? क्या चीड़ के पेड़ों का सफाया सिर्फ इसलिए कर दिया जाना चाहिए कि कुछ लोगों की तिजोरियां भर जाएं? चीड़ के तो बहुत से फायदे भी हैं, लेकिन लैंटिना के सफाए के बारे में क्यों नहीं सोचा जाता? लैंटिना भी तो आग भड़काता है। क्या चीड़ की चिंता इसलिए है कि वह कटेगा तो सब में बंटेगा?

अगर राज्य की कोई सरकार वास्तव में अपने जंगलों को बचाने में गंभीर होती तो लालबत्तियों पर अनावश्यक खर्च करने के बजाए उस पैसे का उपयोग उन आधुनिक उपकरणों की खरीद में कर सकती थी जो आग भड़कने के वक्त मददगार साबित होते। राज्य में ग्रामसभा स्तर तक वृक्षारोपण और जंगलों की सुरक्षा के लिए युवाओं का एक कार्य बल (वर्क फोर्स) गठित किया जाना चाहिए। वृक्षारोपण का कार्य सीधे-सीधे ग्राम सभाओं के हवाले क्यों नहीं किया जाता? जब स्थानीय लोग वर्षों से पतरौल को मदद कर वनों को बचाने की परंपरा का निर्वाह करते रहे हैं तो क्यों उनके अनुभव को आग से बचाने की कार्य योजनाओं में शामिल नहीं किया जाता? एक आवाज लगने पर पहाड़ के जो लोग जंगलों को बचाने के लिए एकजुट हो जाते हैं उनकी जंगलों में तभी दिलचस्पी बनी रहेगी जब उन्हें इनका फायदा होगा। देखना होगा कि ग्रीन बोनस के एवज में आखिर पहाड़ के लोगों को क्या मिला? दुनिया को बहुत बड़ी मात्रा में ऑक्सीजन देते जंगलों और नदियों की रक्षा करने की सजा क्या पहाड़ के लोगों को उनके हक-हकूक छीनकर दी जानी चाहिए?

पर्यावरणविद् आग भड़कने की एक बड़ी वजह भूमि की नमी कम होना बता रहे हैं। पहले पहाड़ के गांवों में लोग ऊंचे स्थानों पर खाल बनाया करते थे। इन खालों में वर्षभर वर्षा जल संचित रहता था। इससे भूमि में नमी बनी रहती थी और पेयजल स्रोत भी रिचार्ज होते रहते थे, लेकिन पलायन के साथ ही ये भी सिमटते गए। जब पहाड़ पर आबादी ही नहीं रही तो इन खालों को अब कौन पुनर्जीवित करेगा? आज पहाड़ के कई गांव पूरी तरह वीरान हो गये हैं। ऐसे में जंगलों को बचाने की परंपरा भी प्रभावित हो रही है। जब तक पहाड़ के विकास की अनुकूल योजनाएं नहीं बनेंगी और जब तक इन योजनाओं के निर्माण और क्रियान्वयन में वहां के आम आदमी के परंपरागत अनुभव को शामिल नहीं किया जाएगा तब तक उस क्षेत्र से पलायन होता रहेगा। आज गांवों के खाली होने का ही परिणाम है कि जलते जंगलों को बारिश के बाद ही राहत मिल पाती है। सरकार जान ले कि जंगल बारिश या भगवान के ही भरोसे नहीं छोड़े जा सकते। पहाड़ के लोगों की भागीदारी के बिना न तो जंगल बचेंगे, न गंगा बचेगी और न ही हिमालय।

-लेखक उत्तराखंड के विषयों के जानकार माने जाते हैं। उमेश डोभाल पत्रकारिता पुरस्कार से सम्मानित हैं।

आखिर कहां जाता है फायर मैनेजमेंट के नाम पर मिला पैसा

वन विभाग को वॉकी-टॉकी, 8 जिप्सी और हर साल जो बजट दिया जाता वह क्या गोपेश्वर में बैडमिंटन खेलने या देहरादून में कोठी खरीदने, अखबारों में सिर्फ विज्ञापन के लिए दिया जाता है? संयुक्त वन प्रबंधन (जेएफएम), जापान (जेआईसीए) से मिला फंड क्या सिर्फ मीडिया मैनेजमेंट के लिए है?

सूचना के अधिकार के तहत मिली जानकारी बताती है कि उत्तराखंड के वन विभाग को फायर सीजन के शुरू होने से पहले पैसा दिया जाता है, फिर डिविजन और रेंज के हिसाब से उसे बांट दिया जाता है। कुछ वन पंचायत जहां सरपंच, सचिव, वन दरोगा या रेंजर हैं उन्हें भी पिछले 5 साल में काफी पैसा दिया गया है। पिछले 10 साल में उत्तराखंड के 13 जनपदों में पर्यावरण पर काम करने वाले किसी भी गैर सरकारी संस्था को किसी भी प्रकार की कोई मदद नहीं दी गयी है। जबकि दूसरी तरफ सिर्फ अखबारों और पत्रिकाओं में प्रचार-प्रसार के नाम पर विज्ञापन के रूप में पिछले तीन सालों में 34 लाख फूंक दिये गये। यदि यह पैसा सीधे हर जनपद में 10 वन पंचायतों को भी दे दिया जाता तो हर वन पंचायत के पास 26.115 रुपये होते जिसका उपयोग आग लगते ही उसके नियंत्रण में किया जा सकता। - **जे. पी. मैथानी**

भारी नुकसान के बाद बुझी आग

आखिरकार कुदरत की मेहरबानी, 11 हजार सरकारी कर्मियों, भारतीय वायु सेना और स्थानीय लोगों के समन्वित प्रयासों से उत्तराखंड के जंगलों में लगी आग पर काबू पा लिया गया है। इस आग से लगभग चार हजार हेक्टेयर वनक्षेत्र बुरी तरह प्रभावित हुआ है और 9 लोगों की जान चली गयी है। कई लोग आग से झुलस गये हैं।

यों तो उत्तराखंड के जंगलों में हर साल आग लगने की घटना होती है, परंतु 1995 के बाद यह पहला मौका है जब आग 5000 फीट की ऊंचाई वाले वनों को पार कर गयी। 1995 में इससे भी भीषण आग लगी थी और वह 7000 फीट तक पहुंच गयी थी। इतनी ऊंचाई पर बांज और देवदार के जंगल पाये जाते हैं। 21 साल बाद फिर से इतनी भयावह घटना हुई है।

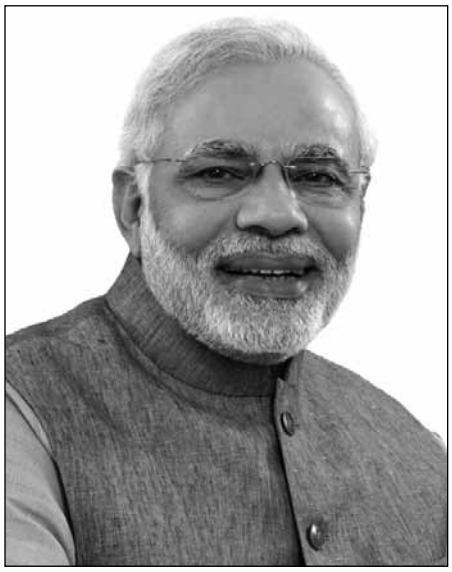

संघ को नापंसद डी-फोर मोदी की नजरों में चढ़े?

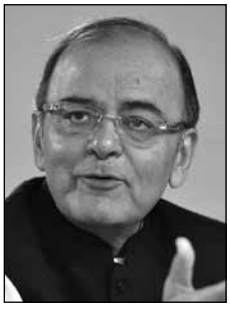
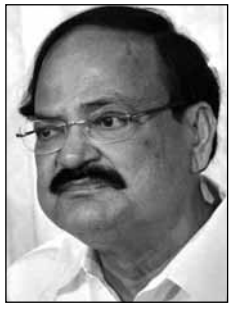

26 मई को नरेन्द्र मोदी सरकार को दो साल पूरे हो गये हैं। इस मौके पर सरकार ने 'जरा मुस्कुरा दो' कार्यक्रम के जरिये अपनी दो साल की उपलब्धियों का जमकर गुणगान किया। दूसरी तरफ मीडिया दिग्गजों ने भी मोदी और उनके मंत्रियों के कामकाज की समीक्षा की और आम जनता से भी इस संबंध में राय ली। ज्यादातर लोगों और समीक्षकों ने प्रधानमंत्री के तौर पर नरेन्द्र मोदी को लोकप्रिय और कामकाज में सफल माना। लोगों ने उनकी एक सांसद-एक गांव, स्वच्छता अभियान, मेक इन इंडिया, स्टार्ट अप, जन धन योजना, उज्ज्वला सहित कई योजनाओं की तारीफ की।

मोदी के साथ उनके मंत्रियों के कामकाज की भी समीक्षा की गयी। तमाम सर्वे व समीक्षकों ने वित्तमंत्री अरुण जेटली, विदेश मंत्री सुषमा स्वराज, शहरी विकास मंत्री वेंकैया नायडू, गृहमंत्री राजनाथ सिंह, सड़क परिवहन मंत्री नितिन गडकरी, रेल मंत्री सुरेश प्रभु, रक्षा मंत्री मनोहर परिकर सहित कई मंत्रियों के कामकाज की तारीफ की है। साथ ही यह भी कहा जा रहा है कि स्वयं मोदी भी इन मंत्रियों के कामकाज से प्रभावित और खुश हैं।

बहरहाल, इस बात की चर्चा जब कुछ पत्रकारों ने राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के प्रमुख मोहन भागवत से नागपुर कार्यालय में की तो वे मुस्करा दिये। खासकर जब पत्रकारों ने जेटली, वेंकैया और सुषमा का नाम प्रमुखता से लिया। दरअसल मोहन भागवत ने जब नितिन गडकरी को अध्यक्ष बनाकर दिल्ली भेजा तो उन्होंने गडकरी को खास हिदायत दी कि डी-फोर ग्रुप के नेताओं से बचकर रहना। आपको जानकर हैरानी होगी कि डी-फोर ग्रुप में जेटली, वेंकैया, सुषमा और अनंत कुमार का नाम था। दिलचस्प बात यह है कि जिन नेताओं को संघ प्रमुख पसंद नहीं करते, क्या वे मोदी की नजरों में चढ़ सकते हैं?

दिल्ली की राजनीतिक गलियों की गहरी परख रखने वाले पत्रकारों का कहना है कि ज्यादातर प्रकाशित समीक्षा या नेताओं की लोकप्रियता सोची-समझी रणनीति का हिस्सा है। वे सवाल करते हैं कि यदि मोदी, जेटली के कामकाज से इतने प्रभावित होते तो वे सुब्रह्मण्यम स्वामी को राज्यसभा में न लाते। गौरतलब है कि जेटली और स्वामी को एक-दूसरे का घोर विरोधी माना जाता है। इसी तरह विदेश मंत्री सुषमा स्वराज के कामकाज से भी मोदी ज्यादा खुश नहीं हैं। यूं भी विदेश नीति का मोर्चा मोदी स्वयं संभाल रहे हैं।

जहां तक संसदीय कार्य मंत्री वेंकैया नायडू की बात है तो वे भी संसद में सरकार के पक्ष में विपक्ष को गोलबंद करने में असफल ही हुए हैं। विपक्ष से तालमेल न हो पाने के कारण सरकार जीएसटी समेत कई महत्वपूर्ण बिल संसद में पास नहीं करा पा रही है, जिसका दर्द मोदी की जुबान से तब छलका जब हाल ही में राज्यसभा के 53 सदस्यों के कार्यकाल खत्म होने पर उन्होंने कहा कि अच्छा होता कि आपके रहते कुछ ऐसे निर्णय होते कि जिन राज्यों का आप प्रतिनिधित्व करते हैं वे हमेशा गर्व का अनुभव करते।

उत्तर प्रदेश में सजने लगा रण

उत्तर प्रदेश में अगले साल विधान सभा चुनाव हैं, लेकिन सभी पार्टियों ने अभी से अपनी कमर कसनी शुरू कर दी है। समाजवादी पार्टी में पुराने समाजवादियों की घर वापसी होनी शुरू हो गयी है। सपा के संस्थापक सदस्य रहे बनी प्रसाद वर्मा ने नौ साल बाद हाल ही में पार्टी में वापसी की है। कहा जा रहा है कि बेनी प्रसाद के जरिये सपा सुप्रीमो भाजपा को जवाब देना चाहते हैं। वे बेनी प्रसाद के जरिये पूर्वांचल की सबसे ताकतवर पिछड़ी जाति कुर्मी को साधने की कोशिश करेंगे। भाजपा ने भी कुछ समय पहले केशव प्रसाद मौर्य को उत्तर प्रदेश का अध्यक्ष बनाकर कुशवाहा, कोयरी समेत अन्य पिछड़ी जातियों में घुसपैठ करने की रणनीति बनायी है। खैर, बेनी प्रसाद के चेहरे से मुलायम सिंह लाभ लेना चाह रहे हों, लेकिन स्वयं बेनी प्रसाद भी बड़े खिलाड़ी हैं। बताते हैं कि उन्होंने अपने लिए राज्य सभा की सीट और अपने बेटे के लिए विधान सभा का टिकट मांगा है, जिस पर मुलायम सिंह ने अपनी मुहर लगा दी है।

बेनी प्रसाद के बाद अब अमर सिंह ने घर वापसी कर ली है। वैसे अमर सिंह को न तो अखिलेश यादव पसंद करते हैं और न ही सपा के फायर ब्रांड नेता आजम खां।

बसपा में भी चुनावी तैयारियां शुरू हो चुकी हैं। बसपा सुप्रीमो मायावती लखनऊ में डेरा डाले बैठी हैं और चुनाव चर्चा पर मशगूल हैं। बसपा में मायावती का फैसला ही आखिरी और अंतिम होता है, इसलिए वे किसी की सिफारिश नहीं सुन रही हैं। पार्टी के कद्दावर नेता नसीमुद्दीन सिद्दीकी और सतीश चंद्र मिश्रा से वह दिन में करीब दो बार मुलाकात कर रही हैं। दरअसल बसपा में चुनाव से कई महीने पहले ही उम्मीदवार खड़े करने का चलन है। ऐसे में उम्मीद है कि कुछ ही माह में मायावती अपने उम्मीदवारों के नामों की घोषणा कर दें।

जहां तक कांग्रेस की बात है तो उसकी गाड़ी प्रशांत किशोर के भरोसे है। ये वही प्रशांत किशोर हैं जिन्होंने लोकसभा चुनाव में नरेन्द्र मोदी और बिहार चुनाव में नीतिश कुमार के प्रचार की कमान संभाली थी और इन दोनों के जीत की पटकथा लिखी थी। लेकिन प्रदेश के ज्यादातर कांग्रेसी प्रशांत के मुकाबले खुद को बड़ा रणनीतिकार मानते हैं। इसलिए वे प्रशांत से बातचीत में कोई दिलचस्पी नहीं ले रहे हैं। बाकायदा प्रशांत जो जातीय समीकरण उन्हें समझा रहे हैं, उसे भी वे नकार रहे हैं।

बहरहाल, तमाम राजनीतिक दलों ने अभी से चुनावी गतिविधियां शुरू कर दी हैं, जो समय के साथ परवान चढ़ती जाएंगी।

क्या चुनाव का विकल्प चुनेंगे रावत?

सर्वोच्च न्यायालय की निगरानी में उत्तराखंड विधान सभा में हुए शक्ति परीक्षण के बाद हरीश रावत जब पत्रकारों के सामने आये तो उनके चेहरे की चमक देखते ही बन रही थी। उन्होंने अपनी अंगुलियों से जीत का निशान बनाते हुए अपने समर्थकों की ओर इशारा किया। बहरहाल, शीर्ष अदालत द्वारा अगले दिन घोषित किये गये नतीजे पूर्वानुमान के मुताबिक थे। इसके तुरंत बाद केन्द्र सरकार ने राज्य में राष्ट्रपति शासन हटाने की सिफारिश की जिसे राष्ट्रपति ने मंजूरी दे दी यानी इससे हरीश रावत के फिर से मुख्यमंत्री बनने पर भी मुहर लग गयी। शक्ति परीक्षण के दौरान कुल 61 में से 33 मत पाने वाले हरीश रावत को मुख्यमंत्री पद की शपथ लेने की जरूरत नहीं पड़ी, क्योंकि कोर्ट के निर्देशानुसार राष्ट्रपति शासन हटते ही वे पुनः मुख्यमंत्री हो गये। खैर, यह बात अब पुरानी हो गयी है।

इन दिनों देहरादून की राजनीतिक फिजाओं में यह सवाल तैर रहा है कि क्या हरीश रावत मुख्यमंत्री पद पर बने रहेंगे या फिर मध्यावधि चुनाव के विकल्प को चुनेंगे? राजधानी के सियासी पंडितों की मानें तो अभी राजनीतिक माहौल पूरी तरह हरदा के पक्ष में है, इसलिए मध्यावधि चुनाव का विकल्प उनके लिए लाभदायक है। जनता की सहानुभूति पाकर न केवल वे सत्ता में मजबूत होकर उभरेंगे, बल्कि पार्टी पर भी उनकी पकड़ पहले के मुकाबले और मजबूत होगी। कहा यही जा रहा है कि जनता की सहानुभूति मिलने के अलावा हरीश रावत को भाजपा में पड़ी फूट का भी पूरा लाभ मिलेगा। दरअसल विधानसभा भंग किये बिना राष्ट्रपति शासन लगाने के पीछे भाजपा की मंशा का पता सभी को था कि वह सरकार बनाने को लालायित थी। लेकिन जब पार्टी आलाकमान ने सेहरा पहनने का मौका पूर्व मुख्यमंत्री भगत सिंह कोश्यारी को दे दिया तो एक अन्य पूर्व मुख्यमंत्री रमेश पोखरियाल निशंक और मुख्यमंत्री बनने का सपना लिए कांग्रेस से भाजपा में शामिल हुए सतपाल महाराज समेत भाजपा के तमाम क्षेत्रीय दिग्गज निष्क्रिय हो गये। पार्टी के भीतर वैसी ही स्थिति अब भी बनी हुई है, यानी पार्टी मध्यावधि चुनाव होने पर यदि किसी एक को मुख्यमंत्री का दावेदार पेश करती है तो बाकी अपनी पूरी ताकत पार्टी को हराने में लगा देंगे।

वैसे मध्यावधि चुनाव के पीछे का तर्क यह है कि किसी तरह हरीश रावत फिर से मुख्यमंत्री की कुर्सी पर काबिज भले ही हो गये हैं, लेकिन अभी भी उनकी कुर्सी पाये ज्यादा मजबूत नहीं हैं। क्योंकि भाजपा और कांग्रेस में जीत का अंतर बहुत ज्यादा नहीं है, जबकि जिन 33 विधायकों के वोटों से हरीश रावत जीते हैं उन सभी चाह सिर्फ कुर्सी ही नहीं बल्कि मलाईदार और रौबदार कुर्सी है। राजनीतिक जानकारों का कहना है कि हरीश रावत को आये दिन इन विधायकों की मान-मनोव्वल करने में समय जाया करने की बजाय चुनाव का विकल्प चुनना चाहिए। खास बात यह है कि हरीश रावत अपनी पार्टी के विधायकों को डांट-डपट भी दें तो भी पीडीएफ (सरकार को समर्थन दे रहा गुट) के सभी छह विधायक मंत्री पद की चाह पाले हैं। इनमें शामिल बसपा के विधायक कुर्सी के लिए अपनी पार्टी छोड़ने का ऐलान तक कर चुके हैं। इन लोगों की मांग पूरी करना हरीश रावत के लिए मुश्किल नहीं है, लेकिन ऐसा करने से अपनी पार्टी के नेताओं के नाराज होने की आशंका है।

गौरतलब है कि कांग्रेस के बागी हुए नौ विधायकों में विजय बहुगुणा सहित कई लोगों की यही शिकायत थी कि हरीश रावत ने पीडीएप के विधायकों को जबर्दस्ती मंत्री बना रखा है, जबकि उनके समर्थन के बिना भी सरकार चल सकती है। ऐसे में पुरानी परिस्थितियां फिर उभर सकती हैं। बहरहाल, सियासी पंडितों का आखिरी और मजबूत तर्क यह है कि बागी विधायकों का मामला अभी सुप्रीम कोर्ट में लंबित है। इससे पूर्व सुप्रीम कोर्ट ने नैनीताल हाई कोर्ट के फैसले को बरकरार रखते हुए बागी विधायकों को वोटिंग से अलग रखा था। मामला वर्तमान में भी कोर्ट में होने के कारण अगर-मगर की गुंजाइश बनी हुई है। खास बात यह है कि बागियों का तर्क भी अपनी जगह मजबूत जान पड़ता है कि विधानसभा में 18 मार्च की स्थिति के अनुसार 10 मई को शक्ति परीक्षण रखना चाहिए था, क्योंकि उस दिन तक वे योग्य थे। इस मामले में अगली सुनवाई 12 जुलाई को होनी है।

वैसे हरीश रावत के मिजाज को देखकर लगता नहीं कि उन्हें किसी चीज का भय है। बाकायदा वे अपने कार्यालय में आने वाले मुलाकातियों से खूब हंस-हंसकर बात कर रहे हैं और हर आने वाले से पूछ रहे हैं कि 'मेरे लायक सेवा क्या है?' सेवा जानने के बाद वे हर आगंतुक को यह कहते हुए आश्वस्त भी करते हैं कि 'हो जाएगा।' बेशक हरीश रावत के चेहरे पर जीत की चमक बरकरार है, लेकिन अंदरखाने यह चर्चा भी उड़ रही है कि मध्यावधि चुनाव के विकल्प को उन्होंने पूरी तरह नकारा नहीं है।

■ **महेश पपनै**

कहर

पकी फसल पर असमय बरसात और ओलों के कहर ने किसानों के पेट और कमर पर जो लात मारी थी, उसी का सर्वे चल रहा था। कौन किस हद तक घायल है उसी हिसाब से मुआवजा मिलना था। सो, दो सरकारी मुलाजिम एक पुरवा से दूसरे पुरवा जा-जाकर कागज रंग रहे थे।

'भाग यहां से सोले, यहां आया तो तेरी खैर नहीं। हिम्मत कैसे हुई यहां आने की? तेरा मन नहीं भरा मेरे बाल-बच्चे खाकर? और कितनों को खायेगा? आ... ले, खा ले... सबको खाजा... आजा, आ के दिखा... तुझे अभी मजा चखाता हूं' कह कर वो अंधाधुंध पत्थर मारने लगा। उसकी विक्षिप्त-सी हालत देख दोनों सर्वेकर्ता दहशत में आ गये। उसमें से एक ने साथ खड़े ग्रामीण से पूछा-

'अरे भैया! इसे क्या हुआ? पागल है क्या?'

'अरे अब क्या बतायें हुजूर! अच्छा-खासा मेहनती किसान था। पिछले साल इन्हीं दिनों ओलों ने इसका सब कुछ बरबाद कर दिया। लागत भी नहीं निकाल पाया बेचारा! ऊपर से साहूकार के तकाज़े। सो खा लिया परिवार सहित जहर, कोई नहीं बचा! बस इसी की नहीं आई थी... सो बच गया, लेकिन बच्चों की लाशें देखकर दिमाग ठिकाने नहीं रहा।'

'ओहो... बहुत बुरा हुआ, लेकिन ये पत्थर किसे मार रहा है?'

'उन्हें' असमय घिर रहे काले बादलों की ओर इशारा करते हुये वो ग्रामीण बोला।

■ **राहिला**

घाघ की कहावतें

आज के समय में टीवी व रेडियो पर मौसम संबंधी जानकारी मिल जाती है, लेकिन सदियों पहले न टीवी-रेडियो थे, न सरकारी मौसम विभाग। ऐसे समय में महान किसान कवि घाघ व भड्डरी की कहावतें खेतिहर समाज का पीढ़ियों से पथप्रदर्शन करते आयी हैं। बिहार व उत्तर प्रदेश के गांवों में ये कहावतें आज भी काफी लोकप्रिय हैं। जहां वैज्ञानिकों के मौसम संबंधी अनुमान भी गलत हो जाते हैं, ग्रामीणों की धारणा है कि घाघ की कहावतें प्राय: सत्य साबित होती हैं।

गहिर न जोतै बोवै धान। सो घर कोठिला भरै किसान॥
गहरा न जोतकर धान बोने से उसकी पैदावार खूब होती है।

रोहिनी बरसै मृग तपै, कुछ कुछ अद्रा जाय।
कहै घाघ सुने घाघिनी, स्वान भात नहीं खाय॥
यदि रोहिणी बरसे, मृगशिरा तपै और आर्द्रा में साधारण वर्षा हो जाए तो धान की पैदावार इतनी अच्छी होगी कि कुत्ते भी भात खाने से ऊब जाएंगे और नहीं खाएंगे।

आसाढ़ी पूनो दिना, गाज बीजु बरसंत।
नासे लच्छन काल का, आनंद मानो सत॥
आषाढ़ की पूणिमा को यदि बादल गरजे, बिजली चमके और पानी बरसे तो वह वर्ष बहुत सुखद बीतेगा।

सर्व तपै जो रोहिनी, सर्व तपै जो मूर। परिवा तपै जो जेठ की, उपजै सातो तूर॥
यदि रोहिणी भर तपे और मूल भी पूरा तपे तथा जेठ की प्रतिपदा तपे तो सातों प्रकार के अन्न पैदा होंगे।

आद्रा में जौ बोवै साठी। दु:खै मारि निकारै लाठी॥
जो किसान आद्रा में धान बोता है वह दु:ख को लाठी मारकर भगा देता है।

कुलिहर भदई बोओ यार। तब चिउरा की होय बहार॥
कुलिहर (पूस-माघ में जोते हुए) खेत में भादों में पकने वाला धान बोने से चिउड़े का आनन्द आता है-अर्थात् वह धान उपजता है।

सुनसान रातों में एक मसीहा निकलता है

पटना के सरदार गुरमीत सिंह अपनी पुश्तैनी कपड़ों की दुकान संभालते हैं। लेकिन रात होते ही वे सरकारी मेडिकल कॉलेज और हॉस्पीटल के मरीजों के लिए मसीहा बन जाते हैं।

गुरमीत सिंह हर रात लावारिस मरीजों को देखने के लिए यहां पहुंचते हैं। वे उनके लिए भोजन और दवाएं लेकर आते हैं। यह सिलसिला पिछले 20 साल से बिना नागा चल रहा है। पूरे 13 साल हो गये भाई गुरमीत कभी पटना से बाहर नहीं गये। वे इन लावारिस मरीजों को उनके हाल पर नहीं छोड़ना चाहते।

गुरमीत अपने पांच भाइयों के साथ अस्पताल के सामने ही एक अपार्टमेंट में रहते हैं। हर रात नौ बजे अपने अपार्टमेंट से बाहर निकलकर अस्पताल की ओर चल देते हैं। जेब में मरीजों की दवाओं के लिए पैसे रखना नहीं भूलते। पांचों भाई अपनी मासिक आमदनी का 10 फीसदी हिस्सा इस मदद में जमा करते हैं। इस अस्पताल में इलाज तो मुफ्त में होता है, लेकिन दवाएं खरीदनी पड़ती हैं। भोजन और दवा के लिए भाई गुरमीत ही इन गरीबों का सहारा हैं।

-अनिल कुमार पंत की फेसबुक पोस्ट

ACME ENTERPRISES®

(A unit of AEMPL)

Service with a professional touch.....

SCO : Kh. No. 295/2, Near Palam Vihar More, Main Road Bijwasan, New Delhi-110061 (India)
Phone: 011-28061086 Email: hospital-furniture@aempl.in Website: www.acmehospitalfurniture.co.in

Works: F-9, RIICO Industrial Area, Road No. 2, Hirawala, Kanota, Jaipur-303012 (Rajasthan)
Phone: +91-1429-234155

MADE EASY

India's Best Institute for IES, GATE & PSUs

Crack in 1st Attempt

ESE, GATE & PSUs

• Best Faculty • Best Study Material • Best Results

Why most of the students prefer MADE EASY !

Comprehensive Coverage
- More than 1000 teaching hours
- Freshers can easily understand
- Emphasis on fundamental concepts
- Basic level to advance level
- Coverage of whole syllabus (Technical and Non technical)

Focused and Comprehensive Study Books
- Thoroughly revised and updated
- Focused and relevant to exam
- Comprehensive so that, there is no need of any other text book
- Designed by experienced & qualified R&D team of MADE EASY

Dedication and Commitment
- Professionally managed
- No cancellation of classes
- Pre-planned class schedule
- Starting and completion of classes on time
- Subjects completion in continuity
- Co-operation and discipline

Complete guidance for written and personality test
MADE EASY has a dedicated team which provides round the year support for
- Interpersonal Skills
- GD and Psychometric Skills
- Communication Skills
- Mock Interviews

Motivation & Inspiration
- Motivational Sessions by experts
- Expert Guidance support
- Interaction with ESE & GATE toppers

Regular updation on Vacancies/Notifications
- Display on notice board and announcement in classroom for vacancies notified by government departments
- Notification of ESE, GATE, PSUs and state services exams

Professionally Managed & Structured Organization
- MADE EASY has pool of well qualified, experienced and trained management staff

Best Pool of Faculty
- India's best brain pool
- Full time and permanent
- Regular brain storming sessions and training
- Combination of senior professors and young energetic top rankers of ESE & GATE

Consistent, Focused and Well planned course curriculum
- Course planning and design directly under our CMD
- GATE & ESE both syllabus thoroughly covered
- Course coordination and execution directly monitored by our CMD

Best Infrastructure & Support
- Well equipped audio-visual classrooms
- Clean and inspiring environment
- In campus facility of photocopy, bookshop and canteen
- Best quality teaching tools

Regular Assessment of Performance
- Self assessment tests (SAT)
- ESE all India Classroom Test Series
- GATE Online Test Series
- Subject-wise classroom tests with discussion
- Examination environment exactly similar to GATE & UPSC exams

Counseling Seminars and Guidance
- Career counseling
- Post GATE counseling for M.Tech admissions
- Techniques for efficient learning
- Full Time Interview support for IES & PSUs

Timely completion of syllabus
- 4-6 hrs classes per day
- Well designed course curriculum
- Syllabus completion much before the examination date

Maximum Selections with Top Rankers
- MADE EASY is the only institute which has consistently produced Toppers in IES, GATE & PSUs
- Largest Selections in GATE
- Largest Selections in IES

Audio Visual Teaching | Hostel Support | Safe, Secured and Hygienic Campus Environment

Courses offered at MADE EASY

- Regular/Weekend/Super Talent Batches
- Rank Improvement Batches
- Online Test Series
- Postal Study Course
- MADE EASY Books
- Interview Guidance Program

Selections from MADE EASY in GATE 2016 & ESE 2015

MADE EASY Students Top in ESE-2015: 38 Selections in Top 10 | 351 Selections out of total 434 | MADE EASY selections in ESE-2015: 82% of Total Vacancies

MADE EASY Students Top in GATE-2016: 53 Selections in Top 10 | 368 Selections in Top 100 | 1st Rankers in 6 Streams: ME • EE • EC • IN • CS • PI

Streams: CE ME EE EC CS IN PI

For more details, visit : **www.madeeasy.in**

Delhi	Noida	Lucknow	Jaipur	Bhopal	Indore	Pune	Hyderabad	Bhubaneswar	Kolkata	Patna
011-45124612	0120-6524612	09919111168	0141-4024612	0755-4004612	0731-4029612	020-26058612	040-66774612	0674-6999888	033-68888880	0612-2356615
09958995830	08860378009	08400029422	09166811228	08120035652	07566669612	09168884343	040-24652324	09040999888	08282888880	09955991166

Corporate Office: 44-A/1, Kalu Sarai (Near Hauz Khas Metro Station) New Delhi-110016; Ph: 011-45124612